अध्याय : 1

मोहन राकेश का व्यक्तित्व, कृतित्व एवं नाट्य साधना

अध्याय : 1

मोहन राकेश का व्यक्तित्व, कृतित्व एवं नाट्य साधना

राकेश का जीवन वृत्त

छटा दशक हिन्दी नाट्य-साहित्य में एक संस्मरणीय काल रहा है। इसी युग में अतीत के काल्पनिक आदर्श तथा संस्कृत की नाट्य-परम्परा की रूढ़ियों से हिन्दी नाटक मुक्त हो गया। वर्तमान की वास्तविकता को हिन्दी नाटक ने कथा-विषय के रूप में अपना लिया। इस युग की प्रथम विशेषता यह है कि इस युग में रंगमंच को महत्व मिलने लगा। जीवन की वास्तविकता ध्वनि, प्रकाश व्यवस्था तथा अन्य उपकरणों की सहायता से नाट्य-रूप में प्रदर्शित होने लगी। इस माध्यम में त्रुटियाँ अवश्य थी, लेकिन यह सार्थक प्रयास रहा है।

स्वतन्त्रता के पश्चात भारतीय समाज में अंतरिक और बाहय रूप में परिवर्तन आ गया। राजनीति की दिशाहीन गति समाज को भ्रष्टाचार की ओर ले गयी। प्राचीन आदर्श और नये जीवन-मूल्य में समाज उलझ गया। किसी एक विश्वास पर अटल न रहने के कारण नयी पीढ़ी में मानसिक द्वन्द की परिस्थिति पैदा हो गयी। नयी पीढ़ी मानसिक दौर्बल्य और कुण्ठाओं की शिकार बन गयी।

सामाजिक विषमता इसी प्रक्रिया की एक कड़ी बन गयी थी। यह भारतीय समाज को मिला अभिशाप है। इसीके साथ आर्थिक विषमता ने समाज में दीवार खड़ी कर दी।

नारी समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह नारी परिवार के भरण-पोषण के लिए नौकरी करने पर मजबूर हो गयी। जिस देवता समान नारी की रक्षा का भार पुरूष समाज पर था वह उनके अत्याचारों की शिकार हो गयी। यहाँ नारी-पुरूष संबंधों में अनेक आयाम पैदा होते हैं। कुछ गलत, कुछ सही।

युग की परिस्थिति तात्कालिन साहित्यकार पर अपना गहरा प्रभाव छोड़ देती है। साहित्यकार के साहित्य में उसी समय की झलक दिखायी देती है। रोंजमर्रा की जिंदगी की वास्तविकता को अपना साहित्य का विषय बनाने वाले साहित्यकार अपनी विशिष्ट भाषा राष्ट्रीय सीमा को पार कर समाज पर छा गये। शायद यही ठोस कारण है कि आज भारतीय नाटक नाट्य-सृष्टि में अपना अलग प्रभावी अस्तित्व बनाने में कामयाब हो गया है।

नये युवा नाटककारों में हिन्दी रंगमंच पर सबसे प्रभावशाली व्यक्तित्व लेकर आये - मोहन राकेश। मोहन राकेश का साहित्य आज भी साहित्य में 'मील का पत्थर' माना जाता है।

जन्म एवं जन्मस्थान

मोहन राकेश का जन्म 8 जनवरी 1925 को अमृतसर में हुआ था। इनका वास्तविक नाम था मदन मोहन गुगलानी। राकेश के पिता श्री·करमचन्द गुगलानी वकील थे तथापि संस्कृत साहित्य में विशेष रूचि रखते थे। माता का नाम था सावित्रीदेवी।

पारिवारिक परिवेश/बचपन

राकेश की अल्पायु में पिता का देहान्त हो गया। पिता की मृत्यु के साथ छोटे राकेश पर कठिनाईयों का पहाड टूट पडा। माँ, बहन और एक छोटे भाई का दायित्व राकेश पर आ पड़ा। घर के हालात ठीक नहीं थे। इतनी आर्थिक स्थिति खराब थी कि मकान मालिक के लड़के ने मुर्दा तभी उठने दिया जबकि उसका किराया अदा कर दिया गया। इस घटना का छोटे राकेश पर गहरा असर अंत तक रहा। कड़ी सर्दी में हाथों से खिडकी की सलाखें पकड़कर आकाश की ओर देखता राकेश अपने मृत्यु तक एक के बाद एक सदमें झेलता रहा।

जिस घर में राकेश का बचपन व्यतीत हुआ वह सीलन से भरा था। घर के वातावरण में दम घुटता था। आर्थिक अभाव और अप्रिय वातावरण में बचपन झुलसता रहा। राकेश के पिता धार्मिक वृत्ति के साथ अन्धविश्वासी थे। गर्मी में भी बारह घंटे बिना पानी पिये जीना राकेश के पिता के अन्धविश्वासी स्वभाव का नमुना है। राकेश अपने पिता से बहुत प्यार करते थे।

राकेश ने स्वयं 1947 में "सरस्वती" में लिखे लेख में कहा है, "बाबा बहुत प्यार करते हैं, उनकी नज़र में भलमनसाहत के लिहाज से मैं गाय या इसी श्रेणी के जानवरों से किसी तरह से कम नहीं हूँ। चार पैसे कमाने लगा हूँ और बिन ब्याहे 21 वर्ष का हो गया हूँ।"[1] बचपन से राकेश झूठ, दिखावा और वास्तविकता को छिपाने का निषेध करते थे। अपने आसपास के लोग एवं परिवार के सदस्यों का उनके आपसी रिश्तों का राकेश गहराई से विचार करते थे। घर के पिछवाड़े में कंजर रहते थे, राकेश के मन में कंजरों के प्रति उत्सुकता थी। लेकिन पिछवाडे जाना और देखना भी मना था। राकेश का मन विद्रोह करने पर मजबूर होता था। माँ ने मना किया था। राकेश के बचपन की ये घटनायें उसके मन में ठोस विचारों की नींव डालती रही कि, दुनिया को निकट से देखो और अपने ढंग से जीने की कोशिश करो। घर में तनावग्रस्त वातावरण था। घर में हमेशा लड़ाई होती रहती थी। राकेश का दम घुटता था।

बचपन में राकेश को दादी माँ जैसे एक शरणस्थल थी। छोटे राकेश के लिए दादी माँ ऐसी आश्रयदायिनी थी जहाँ पहुँचने पर सारे भय, भ्रम और प्रश्न दूर भाग जाते थे।

राकेश का परिवार ऋण-भार से ग्रस्त था। कर्जेवाले नित्य परेशान करते थे। राकेश ने स्वयं पंडित लोकनाथ और सरदार निहालसिंह का उल्लेख किया है जो उनके घर कर्ज वसूल करने आया करते थे। सारे परिवार के मन में निहालसिंह का डर छाया रहता था। अच्छी चीज खाने और पहनने की मनाही रहती थी।

राकेश का बचपन आनन्द से भरा नहीं था। दादी माँ, ताऊ, माँ, पिता के बीच राकेश की मनःस्थिति तनावपूर्ण रहती थी।

यही छोटी-छोटी बातें राकेश के मन पर गहराई से प्रभाव छोड़ गयी थी। राकेश के शब्दों में राकेश का बचपन "डिबिया में बन्द कीड़ों की तरह जीना ही जीने का एक रास्ता था।" राकेश के बचपन में ही विद्रोही मानसिकता बन गयी थी।

शिक्षा

ऋणभार ग्रस्त परिवार,मानसिक घुटन एवं संत्रास के बावजूद भी अपनी शिक्षा की पूर्ति लाहोर और अमृतसर में की। 16 वर्ष की आयु में पिता के प्रेम को वंचित हो गये। मन अस्थिर हो गया इन आपत्तियों के बावजूद राकेश ने हिन्दी और संस्कृत में एम.ए. किया। ट्यूशन और स्टाईपैन्ड के पैसों से काम चलाते रहे। पंजाब विश्वविद्यालय से हिन्दी, संस्कृत में एम.ए. किया। 1949 में राकेश डी.ए.वी.कालेज जालंधर में प्राध्यापक हो गये। जिन बातों को राकेश गलत समझते थे उन बातों से वे समझौता नहीं कर सकते थे। नौकरी से त्यागपत्र देना जैसी आदत बन गयी थी। कुछ समय पश्चात् शिमला के "बिशप काटन स्कूल" में नौकरी की। यहाँ भी नौकरी से समझौता न करने के कारण त्यागपत्र दिया गया। कुछ वर्षों के बाद फिर एक बार डी.ए.वी.कालेज में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष पद पर नियुक्त हो गये। स्वतन्त्र रूप से लेखन करने की इच्छा इतनी प्रबल रही कि त्यागपत्र दे दिया। सन 62-63 में हिन्दी कहानियों की प्रमुख पत्रिका "सारिका" के संपादक रहे। 1964 में इस पत्रिका से त्यागपत्र दे दिया। फिर राकेश आजीवन स्वतन्त्र रूप से लिखते रहे। राकेश ने नौकरियाँ कीं और छोड़ी।

मोहन राकेश के दोस्त श्री श्रीकान्त वर्मा कहते हैं - "मोहन राकेश का इस्तीफा उनकी जेब में हुआ करता था। जो भी व्यवस्था पसन्द नहीं आयी इस्तीफा देकर चल दिये।" सन 1971 में फिल्म वित्त निगम के सदस्य थे। सन 1970 से "नेहरू फैलोशिप" के अधीन "नाटक में शब्द के महत्व" पर कार्य कर रहे थे।

3 दिसम्बर 1972 को अचानक हृदयगति रूक जाने से मोहन राकेश का देहावसन हो गया। राकेश पूरे जीवन भर किसी एक मुकाम पर टिके नहीं। इतनी सारी कहानियाँ झेल कर अपनी शिक्षा पूरी करना जैसे एक तपाचरण ही था।

व्यक्तित्व

आदमी का चरित्र व्यक्तित्व की प्रतिछाया होती है। व्यक्तित्व का अर्थ है व्यक्ति के बोलने का ढंग, कार्य-व्यापार, वेशभूषा, रूचि, आदि। संपूर्ण शारीरिक और मानसिक संगठन का नाम ही व्यक्तित्व है। व्यक्तित्व में बाह्य और आंतरिक गुणों का समावेश होता है। व्यक्तित्व से चरित्र उभरता है। दरअसल व्यक्तित्व और चरित्र एक ही हैं। बहुत कम व्यक्ति होते हैं, जिनके व्यक्तित्व और चरित्र में फर्क होता है। ऐसे लोगों को सही रूप में जानना मुश्किल होता है। मोहन राकेश ऐसे व्यक्ति थे जिनका व्यक्तित्व बाह्य और आंतरिक शब्दों में विश्लेषित किया जा सकता है।

राकेश का बाह्य व्यक्तित्व प्रभावी था। राकेश आकर्षक व्यक्तित्व के धनी थे। राकेश जिसके संपर्क में आते, उसके मन पर अपनी छाप छोड जाते थे। गम्भीर, संतुलित बाह्य व्यक्तित्व के राकेश आकर्षण की क्षमता रखते थे। श्री॰कमलेश्वर राकेश के सबसे करीबी दोस्त रहे हैं। कमलेश्वर और अन्य साथियों ने राकेश का वर्णन ऐसा किया है लगता है हम कोई जिन्दा तस्वीर के सामने खड़े हो गये हो।

राकेश तेजयुक्त पंजाबी युवक थे। गोरा रंग, छोटा कद, घुंगराले बाल, आँखों पर चश्मा, टाई, कोट और हाथ में जलता सिगार यहीं बातें व्यक्तित्व की ठोस पहचान है। महत्वपूर्ण बात थी, राकेश की हँसी और चश्मे के पीछे गहरी नज़र। राकेश का ठहाके लगाकर हँसना उनके मस्ती भरे जीवन की पहचान थी। पास बैठने वाले की चाय की प्याली छलका देने वाली ताकत थी राकेश के ठहाकों में। सिगार के टुकड़े, माचीस की तिलियों के बीच जग भूलकर ठहाके मारने वाले राकेश, मोहन राकेश की पहचान थी।

मोहन राकेश का बाहय व्यक्तित्व जितना सरल एवं संतुलित दिखाई देता था, इतना सरल आंतरिक व्यक्त्वि नहीं था। बाहरी और भीतरी व्यक्तित्व में कोसों का फर्क था। राकेश की पत्नी अनिता कहती है - "बाहर से राकेश जितने सरल और सीधे दीखते थे उतने वास्तव में नहीं थे। उन्हें अन्दर तक ठीक से समझना एक बड़ी समस्या थी। वे बाहर से जितने "इन्फॉर्मल" थे उतने ही ज्यादा मन से फार्मल।" [2]

स्वयं राकेश ने "परिवेश" की भूमिका में कहा है - "कुछ लोगों की जिंदगी में बिखराव होता है। मैं अपने को ऐसे ही लोगों में बिखरना और बिखेरना मेरे लिए जितना स्वाभाविक है, पाता हूँ। संभलना और समेटना उतना ही अस्वाभाविक।" क्या यह बात सौ प्रतिशत सत्य नहीं ? राकेश का बिखरना, कोई समेट नहीं सका। राकेश टूटता ही रहा।

मोहन राकेश का वैवाहिक जीवन अभिशप्त था। वैवाहिक जीवन में राकेश ने इतनी विसंगतियों का सामना किया था कि वे अन्दर ही अन्दर एक टूटन महसूस करते थे। सुखी जीवन की तलाश में वे एक से ज्यादा संबंध बनाते रहे, लेकिन "शादी" और "अपना घर" इन दोनों बातों से सदैव वंचित रहे। प्रथम विवाह 1950इ॰में हुआ। नौकरी में राकेश का मन न लगने के कारण नौकरी छोड़ दी थी। राकेश अपनी लेखनी पर निर्भर रहना चाहते थे इसलिए आपने सुशीला से विवाह किया। यह राकेश की प्रथम पत्नी आगरा के दयालबाग में ट्रेनिंग कॉलेज की अध्यापिका थी। राकेश का विचार था पत्नी नौकरी के साथ गृहस्थी संभालेगी और राकेश लेखन में व्यग्र रहेगा। यह सपना पूरा नहीं हुआ, राकेश का प्राविडेन्ट फंड खत्म होने तक सुशीला ने साथ निभाया और फंड खत्म होते ही इस संबंध में तनाव आने लगे। यह गहरी चोंट राकेश को अंतिम समय तक "शादी" नाम से डराती रही। सही बात यह है कि राकेश की यह शादी हो गयी तब वे शादी के लिये मानसिक रूप से तैयार नहीं थे। अन्दर से आप महसूस करते थे कि यह रिश्ता गलत है। बड़े-बड़े तर्क, वाद के सामने अपनी अंतःप्रेरणा को दबाकर आप शादी के लिये तैयार हो गये। यह रिश्ता सिर्फ डेढ़ साल का था। दोनों यह साथ शिमला में बिताया था। दोनों के विचार भिन्न थे, दोनों में ऐसी कोई बात नहीं थी जिसके

आधार पर वे एक-दूसरे से जुड़ जाते। पाँच साल तक यह रिश्ता निभाया गया, दोनों दो कोसों पर रहते थे, कभी कभी मिलते थे। सुशीला और राकेश दुनिया को यह दिखाने का प्रयास करते थे कि वे आधुनिक रूप से जीवन बिता रहे हैं उनकी अपनी अलग इकाइयाँ हैं। लेकिन विवाह के प्रथम दिन ही उन्हें पता चला था कि वे एक साथ नहीं रह सकते। सुशीला का स्वभाव में अहं था, राकेश से ज्यादा वह कमाती है, स्वतंत्र रह सकती है, किसी भी परिस्थिति का सामना कर सकती है, बातचीत का ढंग मर्दानी था। यह एक-एक बात आगे चलकर राकेश और सुशीला के तनावग्रस्त संबंध को समाप्त करने के कारण बनें।

इ॰1957 में विवाह विच्छेद हो गया। इसी दौरान सुशीला राकेश के बच्चे की माँ बनने वाली थी। उनका पहला बच्चा {नितें} माँ के पास रह गया। इस शादी के बारे में स्वयं राकेश ने अपने मित्र राजेन्द्र पाल को कहा था - "विवाह के पश्चात राकेश की पत्नी आकाश पर उड़ी जा रही थी कि "आखिर तुम्हें मेरे हठ के सामने झुकना पड़ा न। बहुत जिद कर रहे थे, विजय आखिर किसीकी हुई? मेरी नं ? घर के मानसिक तनाव से तंग आकर छोटा भाई वीरेन घर छोड़ कर चला गया था।"[3]

राकेश की दूसरी शादी भी एक गलती बनकर रह गयी। दूसरी पत्नी मानसिक रूप से असंतुलित थी। यह लड़की घनिष्ट मित्र की बहन थी। प्रथम पत्नी से इस लड़की का व्यक्तित्व भिन्न था। इस लड़की में विनय था, दीनता थी। सुख की चाह राकेश में पहले से थी। सुखप्राप्ति की क्षामता भी थी। धनार्जन इतना था कि वैवाहिक जिंदगी आराम से कट जाये। घर भी बदल लिया था। राकेश के नसीब में "घर" नहीं था और सुख नहीं था। यह दूसरी पत्नी विक्षिप्त थी। हँसते हँसते बेहाल हो जाती थी। समझाने पर पैर पटकती, बाल बिखेरकर देवी का रूप धारण करती, शाप देती, ऐसी हरकते भला एक विवाहित स्त्री को कैसे शोभा देती ? इस शादी से राकेश "घर" नाम से डरने लगे। इसी दौरान मोहन राकेश ने आत्महत्या की होती तो वे इन मुश्किलों से छुट जाते, लेकिन जिन्दगी का बोझ वे ढ़ोते रहें।

राकेश "सारिका" कार्यालय में नौकरी करते थे, वहाँ जाकर इस दूसरी पत्नी ने तमाशा खड़ा कर दिया। राकेश के आत्मसम्मान को ठेंस पहुँच गयी और उन्होंने "सारिका" को छोड़ दिया। इस द्वितीय पत्नी का नाम था पुष्पा उर्फ मंजुलिका राकेश। पुष्पा का राकेश के प्रति आरोप रहा है कि राकेश ने पुष्पा के साथ न्याय नहीं किया। राकेश को आधुनिक पत्नी की चाहत थी। "कहाँ बम्बई एक महानगरी और कहाँ गुरूदासपुर एक कस्बा। कहाँ अंग्रेजी बोलने वाली लड़की और कहाँ व्रत रखनेवाली पत्नी। बहुत अन्तर था दोनों में। शायद इसलिए राकेशजी आधुनिक लड़की के मोहजाल में इतना फँस गये कि अपनी पत्नी को यह ग्यारह साल तक रोटी के लिए खर्च भी नहीं दिया।"[4]

राकेश ने तीसरी शादी की। अनिताजी के साथ की यह शादी सिर्फ शादी नहीं थी बल्कि प्रथम सफल प्रेम था। रस्म और रिवाज देखे तो यह सौ प्रतिशत कानूनी नहीं थी। लोग इस सम्बन्ध को किस रूप में देखें यह बात अलग कर दी गयी तो "घर" नाम की वस्तु राकेश को मिली। जिसकी तलाश में वे उम्र भर भटकते रहे वह चीज उन्हें मिली। अनिता राकेश के जिंदगी का सुनहरा हिस्सा है। अनिताजी ने "चंद सितारे और" में सुनहरे पलों का इजहार किया है।

अनिता और राकेश के दरम्यान एक बात समान थी कि दोनों बचपन से एक शान्ति के लिये तरसे थे। जब यह विवाह हुआ तब अनिता बालिग नहीं थी और राकेश दो शादियाँ कर चुके थे, दूसरी शादी से कानूनी तौर पर "डायव्होर्स" नहीं लिया गया था। अनिता को राकेश के लिये अनगिनत कष्ट उठाने पड़े थे, माँ की मारपीट सहनी पड़ी थी। बचपन में माँ का स्नेह नहीं मिला। माँ-बाप होते हुए भी अनिता और उसका छोटा भाई दोनों अनाथों के जैसे पले बड़े हुये।

एक बात अजीब है कि अनिता की माँ राकेश की ओर आकृष्ट हुई थी और राकेश ने उनकी बेटी के साथ ब्याह किया। अनिता और राकेश मन से एक-दूसरे को चाहते थे। अनिता के सहवास में राकेश को सचमुच घर, गृहस्थी, और अपने बच्चों का सुख मिला। दोनों की एक ही चाह थी - "घर" की। इसके लिये वे दोनों कुछ भी करने को तैयार थे। राकेश के एक वक्तव्य से हमें उन दोनों

के अटूट प्रेम का परिचय मिलता है। - "मैं अपना दाहिना हाथ भी इसके लिए (अनिता के लिए) काट सकता हूँ··· मैं इसके लिए कुछ भी कर सकता हूँ।"[5]

अनिता से राकेश को अन्तिम क्षण तक स्नेह मिला। दोनों ने मिलकर एक घोंसला बनाया जिसकी तलाश में वे क्या कुछ नहीं झेल रहे थे। अनिता और राकेश के विवाह का कोई गवाह नहीं था। जब ये दोनों दिल्ली से भागे तब अनिता नाबालिग थी, तीन दिन वे बम्बई में लुक-छिप कर रहे और 3 अगस्त को उन्होंने अपने नये जीवन का आरम्भ किया।

पुरवा और शालीन दो बच्चे उनके अटूट स्नेह और प्रेम के प्रतीक थे। अनिता और बच्चों को पा कर वे जेसे आसमान की बुलन्दी पर खड़े थे। सुख का सबसे बड़ा अनुभव कर रहे थे। डॉ.शरेशचन्द्र चुलकीमठ इसी बात को लेकर कहते हैं - "अनिताजी ने "आषाढ़ का एक दिन" के अथ से आरम्भ करने में असफल कालिदास को नया जीवन दिया है और "लहरों के राजहंस" के दोलायमान नन्द को जीवन भोग का अभयदान दिया है।"[6] राकेश के बारे में एक बात कही जाती थी कि वे 'होम ब्रेकर' हैं। यह बात अनिता के साथ भी होगी, वे ज्यादा देर तक साथ नहीं रहेंगे। लेकिन राकेश ने अपने अंत तक अनिता के साथ सफल और सार्थक दाम्पत्य जीवन बिताया।

राकेश एक ही शरीर में विरोधाभासी व्यक्तित्व लेकर जीते थे। बाहयरूप और आंतरिक रूप पूर्णतः भिन्न था। इसीकारण राकेश को अंत तक कोई व्यक्ति पूरी तरह समझने का दावा नहीं कर सका। अगणित मित्र परिवार, तीन पत्नियाँ और स्वयं राकेश अपने आप को जानने में असफल रहे। बाहर से पूर्णतः संगठित दिखायी देने वाले राकेश आंतरिक व्यक्तित्व में बिखेर हुये थे। असुरक्षित महसूस करते थे। राकेश का आचरण और उनका व्यवहार मनोवैज्ञानिक अध्ययन का विषय है। व्यक्तित्व में असंगति और विरोधाभास भरा था। राकेश का एक जगह पर न टिकना, स्वयं को अकेला महसूस करना, असंतुष्ट मनोवृत्ति से गाँव-गाँव भटकना अस्थिर मनोवृत्ति का द्योतक है। अमृतसर, शिमला, लाहौर, देहली, कुलू, महाबळेश्वर जैसे स्थान बदलकर वे अपने आप को स्थिर रखने की कोशिश करते थे, लेकिन जो

व्यक्ति अन्दर से अपना चैन खो चुका है वह स्थान और गाँव बदलने से चैन पायेगा? कतई नहीं। सिर्फ चैन और सुकून की तलाश में भागते फिरना है।

राकेश अपने ढंग से अपना जीवन जीना चाहते थे। समझौता न करना जैसे एक खासियत थी। नौकरियाँ और बिवियाँ समझौता न करने की वजह से छोड़ दी। समझौता न करने की कीमत उन्हें कदम-कदम पर चुकानी पड़ी। राकेश को सीधी और सपाट जिंदगी से नफरत थी। आनेवाले क्षण को वे आने से पहले जीना चाहते थे। अपनी डायरी में राकेश लिखते हैं - "इसमें क्या सार्थकता है कि आदमी एक ही जिये हुए दिन को बार-बार जिये। फिर-फिर से उसी तरह उसी क्रम से और उसी दायरे में।" तात्पर्य यह कि एक चौखटे में 'फिट' की गयी जिंदगी से वे ऊब जाते थे।

राकेश के लिये दोस्त उनके शरीर का एक हिस्सा थे। दोस्ती में भावुकता और मुखौटे लगाकर झूठी दिखावे की मित्रता नहीं थी। मित्र राकेश के जीवन की महत्वपूर्ण आवश्यकता थी। राकेश ने प्रिय पत्नी अनिता से कहा था - "मेरी जिंदगी में तुम्हारा स्थान तीसरा है। पहले नंबर पर है लेखन, दूसरे नंबर पे मेरे दोस्त हैं, तीसरे नंबर पे तुम हो। लेकिन तीनों ही मेरे लिये बहुत जरूरी हैं।"[7] राकेश के दोस्त थे - गिरधारी वेद, ओंशिवपुरी, जवाहर चौधरी, राज बेदी, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर और ओम प्रकाश भारती आदि। अधिकांश समय राकेश अपना जीवन दोस्तों में व्यतीत करते थे। सौ फिसदी लेना और सौ फिसदी देना दोस्ती की परिभाषा थी। दोस्ती में गलतफहमी होना राकेश के दिल को गहरी चोंट पहुंचा देती थी। अपने दोस्त से गलतफहमी को देखकर वे फूट फूट कर रोये थे। दोस्ती में प्यार के बदले में प्यार की कामना करते थे। राकेश का निधन मित्रों की हँसी और खुशी पर ग्रहण-सा लग गया। मित्रों के लिये राकेश की मित्रता अनमोल निधि थी।

राकेश जिन्दादिल और आत्म-सम्मानी व्यक्ति थे। आर्थिक अभावों में निराश न होना एक खासियत थी। धन का अभाव होते हुए भी ठाठ से रहते थे। मँहगी सिगार और खानपान के बारे में हमेशा अपने ही ढंग से जीते थे। एक बात है कि अपने प्रकाशकों से वे चवन्नी तक का हिसाब लेते थे लेकिन मित्रों के लिये

दिल और जेब हमेशा खुली रहती थी। रही बात आत्मसम्मान की धन से ज्यादा वे साहित्यकार के सम्मान को ज्यादा सँभालते थे। जहाँ साहित्यकार राकेश के आत्म-सम्मान को ठेंस पहुँचे कि वे वहाँ से निकल पड़े। राकेश की नौकरियाँ छोडने की वजह यही तो थी।

राकेश संवेदनशील व्यक्ति थे, माँ के प्रति असीम प्रेम था। माँ के निधन के पश्चात जैसे राकेश टूट गये। जो चीजे, जैसे माँस, मछली माँ को वर्ज्य थी यही चीजे राकेश जब तक माँ जीवित थी बेझिझक खाते थे लेकिन माँ की मृत्यु के पश्चात यह सब खाना छोड़ दिया।

भीतर ज्वालामुखी धधकता था और ऊपर से राकेश ठहाकों पर ठहाके लगाते थे। इन ठहाकों के पीछे वेदना छुपी थी। ठहाकों से वे स्वयं को ठगते थे। जब तक मनचाही चीज वे नहीं कर लेते चैन से नहीं बैठते। निते और पूरवा के लिए (राकेश के बच्चे) हमेशा परेशान रहते कि बच्चों को जो चाहे वह मिल जाये। भावुकता और असीम प्रेम राकेश के जीवन का अभिन्न अंग था।

स्वच्छन्दता एक गुण है लेकिन स्वच्छन्दता के नाम पर अनावश्यक छूट दुर्गुण बनता है। बचपन में जो राकेश पर पाबंदियाँ लगायी जाती थी, युवावस्था और जिम्मेदार व्यक्ति बनते ही मूल विद्रोही स्वभाव ने पाबंदियों को दूर करना शुरू कर दिया। राकेश ने अपने 'इगो' और जिद पूरी करने के लिए स्वच्छन्द मनोवृत्ति को अपनाया। इसी कारण व्यक्तित्व असंतुलित हो गया। अज्ञेजी ने ठीक ही कहा है - "गलती सभी करते हैं, वह बार-बार करता था....वह कायर, कमजोर और अस्थिर चित्ता था।" असल में राकेश "मूडी" स्वभाव के थे। बंधनों से रूचि नहीं थी। गुलामी से चीड़ थी। राकेश पर कोई पाबन्दी हो सकती है यह विचार भी वे सहन नहीं कर सकते थे।

राकेश प्रयोगधर्मी विचार के थे। राकेश को अपनी मान्यता थी कि, "जिन्दगी एक बार मिलती है, जीने के लिए भी और प्रयोग के लिए भी।" यह बात राकेश ने कर दिखायी साहित्य में नाटक, उपन्यास, कथा, किसी क्षेत्र में भी राकेश असफल नहीं रहे। प्रयोग में उनकी मौलिकता थी। अपने स्वतंत्र विचार थे। जीने के लिये

नये माध्यम खोजते रहे, क्या यह एक प्रयोग नहीं है, सुखी जीवन की खोज का? स्वयं अपने ढंग से जीते थे और साथी को अपने ढंग से चलने का आग्रह करते थे।

राकेश का "ईगो" प्रबल था। वे झुकाना चाहते थे, झूकना नहीं। छोटी बातों में उलझते थे। अनिता ने लिखा है - "उसने मित्रता भी की तो अपनी शर्त पर - जिन जिन लोगों ने उसे स्वीकारा था सिर्फ उसी की शर्तों पर स्वीकारा था। अतः कोई भी मित्र ऐसा नहीं जो उन्हें न समझा हो। लेकिन उनकी शर्त मानने के बाद वो फिर उन सबका गुलाम भी हो जाता था।"[8]

राकेश की ज़िद, आवेशी वृत्ति और आत्माभिमान उन्हें "अहं" के पास लाकर छोड़ता है। अपने व्यवहार, जीवन से राकेश जितने ~~ईमानदार~~ थे, उतने ही अपने साहित्य के प्रति ~~ईमानदार~~ थे। राकेश स्वयं के विचार लिखने के लिये साहित्य का उपयोग करते थे। जैसे कलम कागज सबसे अज़ीज़ दोस्त थे। उने दर्द समेटे रखते थे।

मोहन राकेश का साहित्य एवं नाट्य-साधना

कालेज के दिनों में मोहन राकेश में कविता लिखने की रूचि पैदा हो गयी थी। कविता इसलिए कि वह सुनायी जा सकती है और उन दिनों में लिखने से अधिक सुनाने में उन्हें दिलचस्पी थी। इसलिए मन में एक विश्वास हो गया था कि साहित्य का सबसे महत्वपूर्ण अंग कविता है। काव्यक्षेत्र में राकेश ने कुछ लिखा नहीं। दो-चार पंक्तियाँ लिखीं, उसमें मोहन राकेश के अकेलेपन की झलक हमें दिखायी देती है। "उन्नीसवाँ सिगार" की यह पंक्तियाँ मोहन राकेश के दर्द सहने की और जीने की शक्ति की परिचायक है -

"पी लिया
अपने आत्मदाह में
फिर एक बार
जी लिया।"

"चाबुक" कविता से स्पष्ट है कि राकेश की इच्छाएँ अधूरी थी। राकेश का काव्य सामान्य है लेकिन शब्द-शब्द मानसिक स्थिति की अभिव्यक्ति में सक्षम है।

कहानी साहित्य

राकेश की कहानी लेखन यात्रा का प्रारम्भ सन 1944 से माना जा सकता है। राकेश की कहानियों में यथार्थ दृष्टि, जीवन का गहरा बोध तथा अनुभवों की अपनेपन से भरी पूरी अभिव्यक्ति है। राकेश की कहानियाँ कहानी क्षेत्र में आये आधुनिकता का प्रतिनिधित्व करती है। इसमें जीवन के माध्यम से कहानी कल्पना की गयी है। राकेश के कहानी में जो अभिव्यक्त हुआ है वह हमारे आसपास के स्थिति से संबंधित है। कहानी कभी व्यंग्यपूर्ण, कभी तीखे मार्मिक और करूण प्रतिक्रिया में अभिव्यक्त हो गयी है।

राकेश के कहानी-संग्रह पाँच हैं। यह पाँच संग्रह हैं -

1. इन्सान के खंडहर (1950)
2. नये बादल (1957)
3. जानवर और जानवर (1958)
4. एक और जिंदगी (1961)
5. फौलाद का आकाश (1966)

1. इन्सान के खंडहर - (1950)

1950 में प्रकाशित राकेश का प्रथम कहानी संग्रह है। इस संग्रह में ग्यारह कहानियाँ संग्रहित हैं। "इन्सान के खंडहर", "कंबल", "घुंदलादीप", "मरूस्थल", "उर्मिल जीवन", "दोराहा", "एक आलोचना", "लक्ष्यहीन", "वासना की छाया में", "सीमाएँ" और "मिट्टी के रंग" आदि कहानियाँ इस संग्रह में शामिल हैं।

इन कहानियों में राकेश की दृष्टि मध्यवर्ग की घुटन की ओर रही है। शोषित, पीड़ित और श्रमिकों के प्रति राकेश सदय दिखायी देते हैं। धर्म के नाम पर चल रहे आडम्बर और पाखण्ड का इन कहानियों द्वारा पर्दाफाश किया है। सांस्कारिक परिवार और आदर्शों के आधार पर चलने वाले समाज और परिवार के प्रति मन में जो विद्रोही भाव या उसीकी अभिव्यक्ति इस संग्रह की कहानियों में हुई है।

2· <u>नये बादल</u> - (1957)

1957 में प्रकाशित यह दूसरा कहानी संग्रह है। इस संग्रह में तेरह कहानियाँ हैं। 1· नये बादल, 2· मंदी, 3· मलबे का मालिक, 4·अपरिचित, 5· शिकार, 6· सौदा, 7· एक पंखयुक्त ट्रेजेडी, 8· उसकी रोटी, 9· हवामुर्ग, 10· भूखे, 11· उलझते धागे, 12· फटा हुआ जुता, 13· छोटीसी चीज , आदि कहानियाँ इस संग्रह में संकलित हैं।

इस संग्रह की कहानियों में जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत किया है। व्यक्तिगत तनाव और समस्याओं को राकेश ने कल्पना के साथ कहानी द्वारा व्यक्त किया है। इस संग्रह में ज़्यादातर राकेश के निजी जीवन का चित्रण है। एक ओर विभाजन, बेकारी, दोस्तों की जुमलेबाजी से तंग, राकेश के जीवन में अनिश्चितता, संकटग्रस्तता, निराशा और पीड़ा भर गयी थी, इन बातों का संकेत इन कहानियों में मिलता है।

कुछ कहानियाँ सामाजिक सन्दर्भों में लिखी गयी हैं जो जीवन की तीखी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त करती हैं।

3· <u>जानवर और जानवर</u> - (1958)

इस संग्रह में आठ कहानियाँ हैं। "नये बादल" का स्वर इस संग्रह में मिलता है। 1· काला रोजगार, 2· परमात्मा का कुत्ता, 3·मवाली, 4·आर्द्रा, 5· क्लेम, 6· आखिरी सामान, 7· मिस्टर भाटिया, 8· जानवर और जानवर, आदि कहानियाँ इस संग्रह में संकलित हैं।

यह पूरी सामाजिक दृष्टिकोण से लिखी कहानियाँ हैं। कहानियों का मूल स्वर आर्थिक परिस्थिति का सामना करने वाले निम्नवर्ग की समस्या, यातना और विवशता का चित्रण करना है। जीवन की विडम्बनाएँ और तत्संबंधी घुटन को व्यक्त किया है। सरकारी व्यवस्था का खोखलापन, रिश्वतखोरी, निष्क्रियता को तोड़ने वाले संतप्त बेचैन व्यक्ति का चित्रण है। आर्थिक समस्या ने निम्न-मध्य वर्ग को तोड़कर रख दिया है, टूट कर मनुष्य कैसे जीवन की विडम्बना, विवशता को सहता हुआ जीने की कोशिश करता है, जीवन का मोह छूटता नहीं यही सब इस संग्रह की कहानियों में राकेश ने व्यक्त किया है।

4· <u>एक और जिंदगी</u> - (1961)

"जानवर और जानवर" संग्रह के तीन वर्ष बाद इस संग्रह का प्रकाशन हुआ है। इस संग्रह में नौ कहानियाँ हैं - 1· सुहागिने, 2· आदमी और दीवार, 3· हक हलाल, 4· गुनाह बेलज्जत, 5· वारिस, 6· जीनियस, 7·मिसपाल 8· बस स्टैंड की एक रात, 9· एक और जिंदगी।

पहले संग्रह में स्थित संकेत इस कहानी संग्रह में विस्तारित हो गया है। अधिक सघन और सूक्ष्मता से भावाभिव्यक्ति की गयी है। इन कहानियों का परिवेश अधिक वैयक्तिक है। स्वयं राकेश ने भोगा यथार्थ कल्पना के साथ चित्रित किया गया है। जीवन का द्वन्द, अन्तर्द्वन्द को यथार्थता के साथ गहरी चेतना के साथ प्रस्तुत किया है। इनमें अनुभूत पीड़ा है, अव्यक्त यातना है, अकेलेपन के साथ आता जीवन का बोझ है। नारी पुरूष के वैवाहिक जीवन की समस्या से जूझने वाले दाम्पत्य का सूक्ष्म चित्रांकन किया है। नारी पर होने वाले अत्याचारों का वर्णन किया है। टूटी और बिखरी हुई नारी का अंकन कहानी के द्वारा किया है।

5· <u>फौलाद का आकाश</u> - (1966)

1966 में इस कहानी संग्रह का प्रकाशन हुआ है। इस संग्रह में प्रयोगशील कहानियों का संकलन है। यह नौ कहानियों का संग्रह है - 1·ग्लास टैंक, 2· पाँचवे माले का फ्लैट, 3· सेप्टीपिन, 4· सोया हुआ शहर, 5· जख्म, 6·फौलाद का आकाश, 7· जंगला, 8· चौगान, 9· एक ठहरा हुआ चाकू, आदि कहानियाँ

इस संग्रह में संकलित हैं।

आबादी वाले शहर का जीवन, उसकी भयावहता को चित्रित किया गया है। इन कहानियों में भावात्मक संबंधों की ऊब है, अकेलापन है, रिश्तों से मुक्त होने के लिए किये गये संघर्ष की योजना है। जीवन की असुरक्षा, भयावहता की अभिव्यंजना का चित्रण है। पारिवारिक 'ट्रेजेडी' को कहानी द्वारा उजागर किया है। इन कहानियों में राकेश ने प्रयोग किये हैं। ठोस कथा का अभाव होकर सिर्फ स्थिति के माध्यम से व्यक्त किये गये भावों का प्रयोग है।

राकेश की कहानियाँ समकालिन जीवन की समस्याओं को प्रकाशित करती है। जीवन में भरी ऊब, अकेलापन का एहसास और उदासी का सूक्ष्म अंकन किया गया है। मानवी संबंधों को गहराई से चित्रित करने में राकेश सफल रहे हैं। मानवी संबंध, संबंधों में कटुता, त्रासदी और तिक्तता के साथ व्यक्त किये गये हैं। राकेश के लेखन के पीछे जो अनुभूतियाँ हैं, वह कृत्रिम नहीं है, राकेश ने बचपन से जो संत्रास, पीड़ा को देखा है, स्वयं झेला है उसी का परिणाम इन कहानियों में व्यक्त तीखापन है। लेखक अपने परिवेश से जो कुछ पाता है वही साहित्य के माध्यम से व्यक्त करता है। राकेश की यही अलग पहचान रही है कि राकेश मध्य और निम्न वर्ग की समस्याओं को गहराई के साथ व्यक्त करते थे। कहानियाँ एक प्रकार से वर्तमान के परिस्थिति का प्रतीक है।

निबंध-साहित्य

साहित्य में सर्वाधिक अहमियत साहित्यकार के व्यक्तित्व को होती है। साहित्य में वही अभिव्यक्त होता है जो साहित्यकार के मन में होता है। मन में प्रथम विषय का मंथन होता है और वही कला के रूप में व्यक्त होता है। राकेश का साहित्य "राकेशपन" व्यक्त करता है। राकेश की प्रतिभा कहानी और नाटकों में ज्यादा चमक उठी है। उपन्यास में मध्यवर्गीय घुटन को गहराई से अभिव्यक्त किया गया है। राकेश की प्रतिभा बहुमुखी है। साहित्यकार को भावना की अभिव्यक्ति के लिये खास साहित्य विधा का सहारा लेना जरूरी नहीं होता। राकेश ऐसे ही साहित्यकार हैं, जिस विधा की ओर चल पड़े वहाँ कदमों के निशान छोड़ आये,

पूरे राकेशपन के साथ। नाटक, कहानी, उपन्यास, एकांकी के साथ निबन्धों का भी निर्माण किया जो अपनी जगह पर अपना महत्व बनाये रहे हैं।

1· <u>परिवेश</u> - (1967)

1967 में लिखा निबंध-संग्रह राकेश का पहला निबंध-संग्रह है। निबंध और लेख में फर्क इतना है कि निबंध में व्यक्तित्व शामिल होता है। "परिवेश" के निबन्ध एक दूसरे से काफी अलग हैं। विषय, भाषा, मानसिकता की दृष्टि से निबंधों में फर्क है। स्वयं राकेश ने निबंधों को आठ शीर्षकों में विभाजित किया है। 1· अपना आप और कुछ परिचित चेहरे, 2· यात्रापरक, 3· तिरछे कोन, 4· दायरें, 5· रचना दृष्टि, 6· सम्मेलन, प्रश्न और परिसंवाद, 7· समकालीन बिंदु, 8· एक उनिंदा शहर।

इन आठ शीर्षकों के अन्तर्गत 21 निबंध हैं। येः निबंध एवं लेख राकेश के व्यक्तित्व और मानसिकता को पूरे व्यक्त करते हैं। निबंध के माध्यम से कहीं संस्मरण है, कहीं यात्रा उल्लास है। लेकिन अभिव्यक्ति में गम्भीरता एवं विचारों की गहराई विद्यमान है। उपन्यास में उठायें प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास भी किया गया है।

कुल मिलाकर यह निबंध-संग्रह राकेश की मानसिकता का परिचायक है। निबंधों की एक विशेषता यह भी है कि वे सीधे सपाट होने के साथ रोचक हैं।

2· <u>बकलम खुद</u> - (1974)

"बकलम खुद" में राकेश के कहानी संबंधी निबंध संकलित हैं। यह निबन्ध समय-समय पर विभिन्न कहानी पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। इन निबंधों की शैली वार्तालाप की है पर स्वरूप समीक्षा का है। विनोद के सहारे गंभीर और तर्क प्रधान किस्सों पर प्रकाश डाला है। निबंध पढ़ते समय महसूस होता है कि राकेश कोई गम्भीर विवेचन नहीं कर रहे हैं, सीधे आत्मीयता से बात कर रहे हैं। विषय गंभीर है लेकिन शैली की वजह से पाठक पढ़ते समय बोझिलपन महसूस नहीं करते हैं।

§1§ बकलम खुद :- इसके अन्तर्गत लिखे गये निबंधों में नयी कहानी से संबंधित प्रश्न, जिज्ञासा और समस्या का विवेचन है। राकेश के निबंध गंभीर एवं विवेचनात्मक हैं। कहानी का प्रारम्भ, यथार्थ जीवन, परिवेश की जटिलता, मानव-मानव के संबंध, समकालिन लेखकों की कहानियाँ आदि पर राकेश ने इन निबंधों में विचार किया है।

§2§ नयी निगाहों के सवाल :- "नयी निगाहों के सवाल" खण्ड के अंतर्गत सन 1964 में लिखे गये राकेश के चार निबंध संकलित हैं। इन निबंधों में नयी और पुरानी पीढ़ी के संघर्ष को रोचकता से प्रस्तुत किया है। देश विभाजन के समय पुराने आदर्श मिट्टी के ढाँचे की तरह टूटते गये और इसी "क्राइसिस" को झेलते नयी पीढ़ी अपना मार्ग ढूँढने लगी। नये भावों का निर्माण इसी "क्राइसीस" पर आधारित थी। यही विषय इस निबंधों का है। राकेश ने यह भी कहा है कि मनुष्य बातें करते समय तिलिस्म ढंग का प्रदर्शन करता है यह ठीक नहीं, सही दृष्टिकोण ग्रहण करना चाहिए। आंतरिक दृष्टि की वृद्धि होनी चाहिए।

§3§ बलकम खुद के तीसरे खंड में वे निबंध संकलित हैं, जो सन 1967 में लिखे थे। राकेश ने इन निबंधों में विविध विषयों पर दृष्टिपात किया है। उन लोगों पर व्यंग्य कसा है जो हर नये संदर्भ में बिना रचना को आधार बनाये लगभग एक से शब्दों में बार-बार एक ही बात दुहराते हैं। राकेश की दृष्टि से मार्क्सवाद का महत्व स्वीकारना महत्वपूर्ण बात नहीं है। महत्वपूर्ण बात यह है कि, मनुष्य के मन में जन्मा हुआ स्वीकार या अस्वीकार उसके व्यक्तिगत चिंतन का परिणाम है या नहीं।

ये निबंध गंभीर एवं चिंतनात्मक है। आलोचना की दृष्टि से लिखे गये ये निबन्ध तिक्तता और मिठास की शैली में व्यक्त किये गये हैं।

राकेश : साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि §1975§

प्रस्तुत कृति में राकेश के प्रमुख तीन प्रकार के निबंधों को संकलित किया है।

प्रथम वर्ग के निबंधों में राकेश ने साहित्यकार की समस्या, रचनाकार के संकट, आज की कहानी के प्रेरणास्त्रोत और कथा-साहित्य की नवीन प्रवृत्तियों को विश्लेषित किया है। इन निबंधों में निबंध, कहानी विषयक सिद्धान्तों पर विचार किया है। रचना प्रक्रिया और प्रेरक तत्वों पर सर्जनशील दृष्टिकोन से चिंतन किया है।

दूसरे वर्ग के निबंध समीक्षात्मक है। नाट्य-साहित्य से संबंधित समीक्षात्मक निबंधों में नाट्य-प्रयोगों की भी समीक्षा की है। नये विचारों को प्रस्तुत किया है और पूरानी मान्यताओं का स्पष्ट विरोध किया है।

इसके अतिरिक्त कृति में राकेश की सांस्कृतिक दृष्टि दिखायी देती है। यह संग्रह राकेश की समीक्षक और गंभीर विवेचनात्मक दृष्टि स्पष्ट करता है।

राकेश ने अपने निबन्ध साहित्य में अनेक शैलियों का विधान किया है। निबन्ध के विषय और शैलियाँ निबन्ध के अनुकूल है।

रिपोर्ताज, संस्मरण, रेखाचित्र, डायरी और आत्मकथा

रिपोर्ताज, संस्मरण, रेखाचित्र, गद्य साहित्य की नवीन विकसित विधाएँ हैं। गद्य साहित्य का विकास स्वातंत्र्योत्तर काल में गति से हुआ। गद्य साहित्य ने परम्परा की दीवारों को तोड़ कर नये मार्ग को अपनाया।

मोहन राकेश प्रतिभा शक्ति का दूसरा रूप थे। मस्तिष्क चिंतन का मशीन था। जो जो विधाएँ राकेश लिखते गये वहाँ अपनी अमीट छाप छोड़ते रहे। रिपोर्ताज, संस्मरण, रेखाचित्र आदि साहित्य अत्यल्प हैं। यह साहित्य अल्प होते हुए भी लोकप्रिय रहा है। राकेश का हृदय संवेदनशील था, जो बात दिल को छू गयी वह नये रूप में कागज पर उतरती रही।

रिपोर्ताज

रिपोर्ताज निबंध विधा का एक हिस्सा है। रिपोर्ताज का संबंध पत्रकारिता के साथ होता है। इन निबंधों में राकेश के पत्रकारी स्वभाव के दर्शन होते हैं।

किसी घटना का वस्तुनिष्ठ वर्णन और मानवीय संवेदना का मिश्रण निबंधों में है। रिपोर्ताज में लेखक आनुभतिक प्रामाणिकता की झलक दिखायी देती है। राकेश ने रिपोर्ताज अधिक नहीं लिखे। एक रिपोर्ताज मोहन राकेश : स्मृति अंक, सारिका मार्चा 1973 में उपलब्ध है। राकेश के रिपोर्ताज में कहानी के गुण हैं। इस रिपोर्ते में दूध दुहाने वाले और उससे संबंधित घटना है। रिपोर्ताज का शीर्षक है "सतयुग के लोग।"

रेखाचित्र और संस्मरण

यह निबंध का कलात्मक संस्मरण है। इसमें किसी व्यक्ति, स्थिति या दृश्य का शब्द चित्र प्रस्तुत किया जाता है। "दिल्ली रात की बाहों में" एक रेखाचित्र है जिसमें वर्णनात्मकता है। रात नौ बजे के बाद दिल्ली में क्या घटित होता है, वहाँ की जिंदगी कैसी है ? झुग्गियों की जिंदगी के बारे में सूक्ष्म वर्णन किया है। रात के बदलते रंग एवं घटना और अघटित भी मुँह बोलते ढंग से व्यक्त किया है।

डायरी

मोहन राकेश नियमित रूप से डायरी लिखते थे। डायरी में राकेश के जीवन की घटनाएँ और संदर्भ हैं। डायरी में राकेश का कवि मन अपना अंतर्मन खोलता है। यह डायरी तिथि और तारीख वार लिखी गयी एक साहित्यिक डायरी है। इसमें अकेलेपन का बोझ न उठाने वाली पीड़ा है, खालीपन का एहसास है। दैनंदिन जीवन में मिलने वाले व्यक्तियों का असली रूप है, धोखा-धड़ी है। यह सब व्यक्त करने के लिए राकेश स्वयं से ईमानदार रहे हैं। कोई दुराव एवं छिपाव नहीं है। अविश्वसनीय संदर्भ कहीं भी नहीं दिये गये हैं।

यह एक भावुक हृदय के साहित्यकार की डायरी है। राकेश की डायरी जीवन के यथार्थ क्षणों को व्यक्त करती है। चिंतनपूर्वक एक सखी से दिल खोलकर बात कही है। डायरी मानो सखा या सखी से कुछ ज्यादा होती है।

जीवनी साहित्य

राकेश ने जीवनियाँ लिखी हैं। उनकी "समय सारथी" नामक कृति में जीवनियों को महत्वपूर्ण स्थान है। इन जीवनियों में महापुरूषों के जीवन का इतिहास और मनोव्यापार का चित्रण है। ये जीवनियाँ ऐतिहासिक क्रम में है। कालखंडानुसार महापुरूषों का चित्रण है। जिन व्यक्तियों की जीवनियाँ लिखी हैं, वे व्यक्ति मानवता के पूजक थे, मानवता के लिए संघर्ष करते रहे हैं।

महापुरूषों के विचारों के साथ प्रेरित स्वर का उल्लेख है। राकेश का प्रयत्न रहा है कि इन महापुरूषों के विचार सीधे एवं सरल भाषा में आम साधारण व्यक्ति तक पहुँचे। इन महापुरूषों में गौतम बुद्ध, सुकरात, अशोक, जोन ऑफ आर्क, कबीर, मीरा, स्वामी दयानंद, भगतसिंह, वाल्टेयर आदि व्यक्तित्वों के साथ गांधी, नेहरू और मार्टिन ल्यूथर किंग भी शामिल हैं।

उपन्यास साहित्य

मानव संबंधों की पुनर्व्याख्या और नये-पुराने मूल्यों के संघर्ष से उत्पन्न पीड़ा को आधुनिक बोध के साथ व्यक्त करने वाले, राजेन्द्र यादव, मन्नू भंडारी, नरेश मेहता, निर्मल वर्मा, श्रीकांत वर्मा, लक्ष्मीकांत वर्मा तथा उषा प्रियम्वदा आदि लेखकों के साथ मोहन राकेश का स्थान और नाम विशेष उल्लेखनीय है।

राकेश के उपन्यास कथा की दृष्टि विवाह और मुक्ति, स्वातंत्र्य और बंधन, स्वीकार और अस्वीकार आदि कथाबीजों की ओर है। इन्हीं समस्याओं या परिस्थिति से निर्माण होने वाला संघर्ष इन राकेश के उपन्यासों में दिखायी देता है। राकेश ने कुल मिलाकर तीन उपन्यास लिखे "अँधेरे बन्द कमरे", "अन्तराल" और "न आनेवाला कल"। इन उपन्यासों में अलगाव अजनबीपन की स्थितियों का आकलन है। तीनों उपन्यास में मानव जीवन के जीवन्त पहलू, स्त्री-पुरूष संबंध और उससे उत्पन्न द्वंद-प्रतिद्वंद और अंतर्द्वंद को महत्व दिया गया है। उपन्यास में ऐसे पात्रों का जीवन है जिनको मुक्ति की कामना है किंतु वे स्वयं को वहाँ तक ले नहीं जा सके हैं।

राकेश का संपूर्ण साहित्य समकालिन जीवन-बोध को व्यक्त करता हैं उपन्यास भी इसी की एक कड़ी है।

1. **अँधेरे बन्द कमरे** -

यह उपन्यास वैवाहिक जीवन की विसंगतियों की ओर संकेत करता है। पति-पत्नी के अर्थहीन रिश्ते को व्यक्त किया है। एक परिवार की यह कहानी है जिसमें कई लोग है, कई जिंदगियाँ हैं, सारे पात्र अपने-अपने ढंग से जीना चाहते हैं। कथातत्व नगण्य-सा है। हरबंस और नीलिमा के माध्यम से मध्यवर्गीय वैवाहिक जीवन की विंसगति और असंगतियों को व्यक्त किया है। आज का जीवन कितना कृत्रिम और तनाव भरा है, उसे जीने वाले व्यक्ति किन स्थितियों से गुजरते हैं, इसका प्रामाणिक आलोचनात्मक उपन्यास है। आज व्यक्ति और व्यक्ति के बीच दरार बन गयी है। पति-पत्नी असमर्पित और विश्वासहीन जीवन जी रहे हैं। हरबंस का प्रथम समाजाभिमुख होकर पत्नी को उत्तेजना देना और नीलिमा की उन्नति होने पर स्वयं को कोसते रहना कायरता, कमजोरी और स्वार्थ की निशानी है। नीलिमा स्वच्छंद एवं महत्वाकांक्षा नारी है। वह अपने अस्तित्व के प्रति जागरूक है, स्वाभिमानी है, भावुक है पर विवेकशून्य नहीं है, पति हरबंस के प्रति ईमानदार है।

यह दाम्पत्य खोखलेपन से भरा जीवन जी रहे हैं। अँधेरे में भटक रहे हैं, टकरा-टकरा कर भी साथ जीने के लिए विवश हैं। दोनों सहजीवन की प्राणघाती पीड़ा भोग रहे हैं। इन सबमें एक और पात्र है जो घटना, दृश्य और पात्रों का दर्शक मात्र है। यह पात्र अन्य पात्रों की पीड़ा को सहता नहीं है। "मधुसूदन" एक पत्रकार है। "मधुसूदन" जिस परिवेश में रहता है वहाँ की समस्या अनचाहे परिवेश से निर्माण हो रही समस्याएँ हैं। यह इन्सान इस उपन्यास में नीलिमा और हरबंस के बन्द कमरे, मतलब दिलों की धड़कने सुनाता रहा है। मधुसूदन सिर्फ "नेरेटर" है।

स्वयं राकेश ने उपन्यास के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए कहा है - "व्यक्ति और व्यक्ति के बीच एक गहरी खाई है और आसपास एक गहरा सड्डा है - वे चाहकर भी इसे भर नहीं पाते, पर न भर पाने की मजबूरी से बचकर

क्या वे रह सकते हैं ? अँधेरे में भटकते रहना और बन्द होकर रहना उनकी मजबूरी है, फिर भी वे रह सकते हैं एक साथ एक ही कमरे में। यह कमरा उनकी साझी जिंदगी है। अँधेरा होने, बन्द होने से मुक्ति एक दूसरे से हटकर उनके लिए नहीं है - न एक के लिए और न दोनों के लिए। इसलिए रात-दिन आपस में टकराते हुए एक साथ जिये जाते हैं क्योंकि मुक्ति उनके लिए यदि है तो वह एक-दूसरे में और एक-दूसरे की साझेदारी में है पर उन्हें मुक्ति नहीं मिल पाती।"[9]

राकेश यही बताना चाहते हैं कि आज हर व्यक्ति अन्दर से अकेलापन और शून्यता अनुभव कर रहा है। बाहर और भीतर से बिखर गया है। अस्तित्व का प्रश्न तो मूलभूत प्रश्न है। एक-दूसरे से मन से अजनबी पति-पत्नी एक साथ रह सकते नहीं पर रहने के लिए विवश हैं। सभी अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे हैं। यह राकेश का प्रभावी यथार्थवादी उपन्यास है। आधुनिक जीवन की विसंगतियाँ तथा जटिलता को प्रस्तुत करने में राकेश सफल रहे हैं। पति-पत्नी के अन्तर्द्वन्द्व की अभिव्यंजना उत्कृष्टता से व्यक्त हो गयी है।

2. <u>न आने वाला कल</u> -

"अंधेरे बन्द कमरे" उपन्यास के बाद पूरे सात वर्ष बाद राकेश ने "न आने वाला कल" उपन्यास का सृजन किया। सात वर्षों में परिस्थिति, समस्या और इन सब के बीच की पीसता व्यक्ति एक ही जगह पर है। वर्षों बीत जाने से कोई खास परिवर्तन नहीं हो गया है। सबकुछ वैसा ही वैसा है जैसा सात वर्ष के पूर्व था।

आज के समाज का ढाँचा ऐसा कुछ बन गया है जहाँ कुछ निश्चित नहीं है। यांत्रिक जीवन से आयी बुद्धि की निष्प्राणता के कारण सारा जीवन जडवत हो गया है जहाँ चेतना का अंश नहीं रहा। अतीत ने ऐसे कुछ बीज नहीं बोयें हैं जो नवचेतना के रूप में इस पीढ़ी को मार्गदर्शित करें। सभी मानव अस्थिर जीवन और जीवन के अनिश्चिता के बीच पीस रहे हैं।

राकेश हमेशा आने वाले क्षण को आने से पहले जीना चाहते थे। इस उपन्यास के पात्र उस मनचाहे कल की कामना करते हैं जो कल आ जायेगा पर मनचाहा शायद हो न हो। राकेश ने स्वयं इस परिस्थिति को भोगा है, पहचाना है। इस भावना को कल्पना के साथ उपन्यास में व्यक्त किया है। दिनों-दिन बढ़ती अकेलेपन और अस्तित्व की समस्या तथा दाम्पत्य में पनप रही कटुता का चित्रण किया गया है। इस उपन्यास में ऐसा व्यक्तित्व है जो नारी और नौकरी से परेशान है। घुटन भरे जीवन से रास्ता खोज रहा है, जो मिलता नहीं है। उसके समक्ष सबसे अहम् समस्या है अस्तित्व रक्षण की।

इस उपन्यास का नायक मिशनरी स्कूल के अध्यापक मनोज है। मनोज स्वाभिमानी है, अपने अस्तित्व के प्रति सजग है। अस्तित्व रक्षा के साथ आती त्रासदियों से परेशान है, अकेलेपन को ओढ़ लिया है। एक समय दो प्रश्नों से लड़ रहा है जो जीवन के जरूरी तत्व है - पत्नी और नौकरी एवं अर्थार्जन। यह मनोज अपनी पत्नी के सामने सहज नहीं रह सकता। वास्तविक मनोज की पत्नी शोभा गृहिणी कहलाने लायक है। पत्नी का सहजीवन साथी बनने में मनोज कष्ट अनुभव करता है। बेहद शराब पीता है और हर सात-आठ दिन एक नयी लड़की से प्रेम रचाता मनोज पत्नी शोभा को न्याय देने में कतराता है। वह पत्नी और अनचाही नौकरी में घुटन का अनुभव करता है। उसके जीवन में रिक्तता है जो वह हर प्रकार भरने की कोशिश में लगा रहता है। वह सदैव द्वन्द्वात्मक परिस्थिति अनुभव करता है, पत्नी को पत्र लिखना हो या नौकरी से त्यागपत्र देने की बात हो, सारासार विचार के बाद ठोस निर्णय नहीं ले सकता। मनोज अन्य सहयोगियों से भिन्न पात्र हैं। उसे दबाव बन्धन एवं बोझ बनकर जीना पसन्द नहीं। स्पष्टवादी है लेकिन स्पष्टवादी होने के लिये काफी द्वंद से गुजरना पड़ता है। पत्नी शोभा के बगैर मनोज अकेलेपन को महसूस करता है। अपनी मनोकामना पूरी करने के लिए मनोज कतई डरता नहीं है। स्त्रियों के साथ चलते, टूटते शरीर-संबंध इसी बात के परिचायक हैं।

इस उपन्यास में स्थित मानवीय अनुभूति का बोध गहरा है। दाम्पत्य जीवन को जीने वाले और उससे अलग जीवन गुजारने वाले पात्र निरर्थक और अनिर्णित परिस्थिति के शिकार बन गये हैं। मानवी सभ्यता के विकास के साथ नैतिक मूल्यों

का पतन होता दिखायी देता है। मानव के आपसी, निजी संबंध में तनाव और व्याकुलता भर गयी है। मनुष्य इस संत्रास स्थिति से मुक्त होना चाहता है पर उसके हाथ में कुछ नहीं है। वह रास्ता तक खोज नहीं सकता। अंत में इन सब परिस्थितियों से उपजी पीड़ा को झेलना अनिवार्य है। इस उपन्यास के सभी पात्र एक दूसरे से जुड़कर भी अपना अलग अस्तित्व बनाये रखना चाहते हैं।

"न आने वाला कल" उपन्यास आधुनिक जीवन की विसंगति, मानवी रिश्तों में उत्पन्न तनावों को व्यक्त करता है। अकेलेपन की समस्या, जीवन के प्रति ऊब, और मुक्ति के लिये छटपटाते व्यक्तियों का सूक्ष्म अंकन किया गया है। यह उपन्यास राकेश के जीवन का हिस्सा प्रतीत होता है। नौकरी और पत्नी से दूर रहने की चाहत राकेश के जीवन का हिस्सा बन गया था। अनचाहे व्यक्तित्व के साथ जीवन बिताना और अस्तित्व को महत्व न देने वाली नौकरी करना राकेश के लिये पीड़ा जनक था। ठीक यही अनुभव मनोज, शोभा और काल्पनिक परिवेश के माध्यम से व्यक्त किया गया है।

इस नाटक में स्थित मनोज, शोभा, जिमी, मिस बानी हाल, टोनी व्हिसलरा तथा इनकी पत्नी जेन व्हिसलर सभी पात्र अपनी-अपनी समस्याओं से घीरे हैं। पात्रों का चेहरा अलग-अलग है लेकिन पूरा व्यक्तित्व एक ही है।

3. <u>अंतराल</u>

राकेश का तीसरा उपन्यास है - "अंतराल"। यह उपन्यास पति-पत्नी के जीवन का एक अलग दृष्टिकोन व्यक्त करता है। एक-दूसरे को सहते जाना और झेलते जाने का दृष्टिकोन। यहाँ समस्याएँ ठीक वहीं हैं, जो राकेश के समस्त पात्र भोग रहे हैं पर एक समस्या ऐसी है जो अपने-आप को मन ही मन दिमग की तरह खोखला करती रहती है, बाहर से इस समस्या का अंश भी नहीं दिखायी देता।

वर्तमान युग में पति-पत्नी के सम्बन्ध में जटिलता आ गयी है। एक नामहीन रिश्ता बन रहा है और यही रिश्ता इस उपन्यास का महत्वपूर्ण बिंदू है।

यह नामहीन संबंध अन्य रिश्तों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। मन, भावना, शरीर से अलग एक भावना है। आज के युग में नारी-पुरूष सम्बन्ध अधिक प्रश्निल होते जा रहे हैं। स्वातंत्र्य की आस रखने वाली नारी पुरूष की जकड़ और प्रभाव से निकलना चाहती है। नारी को सदैव उपभोग्य वस्तु के रूप में समाज ने दूसरे स्थान पर देखा है। भारत में अभी तक नारी पर एक अदृश्य मर्यादा का बंधन रहा है, यहाँ नारी अपने परिवार से जुड़ी और पति पर निर्भर है। नारी स्वयं को मुक्त करना चाहती है पर अपने परिवार से रिश्ता कायम रखते हुए। विदेश में आर्थिक सुबत्ता के साथ नारी स्वयं की महत्वाकांक्षा को महत्व देती है।

"अंतराल" एक आधुनिक नारी श्यामा की कहानी है। श्यामा परम्परा एवं संस्कारों से जकड़ी नारी है। पति की मृत्यु विवाह के डेढ़ वर्ष के पश्चात् टाइफाइड से हो गयी है। डेढ़ वर्ष का सहजीवन सिर्फ "बीत गया है"। पति के साथ श्यामा शरीर से ज्यादा कुछ जुड़ी नहीं थी। श्यामा देव के मृत्यु के पश्चात् उससे शिकायते करती हैं यह एकपक्षीय झगडा है। इसलिये श्यामा मन ही मन उसी दायरें में जी रही है। पति देव श्यामा से ज्यादा कुछ चाहता नहीं था। सरल एवं स्पष्ट जीवन था देव का। देव के साथ खामोशी से डेढ़ साल बिताये हैं। देव श्यामा के प्रति उदासीन है पर इस उदासीनता को वह खुलकर व्यक्त करता नहीं है। सिर्फ झेलता जाता है। इस उदासीनता का कारण स्वयं श्यामा ही है। खैर, अब देव नहीं रहा फिर श्यामा को उससे क्या शिकायत है ? लेकिन ऐसा नहीं श्यामा अपने दाम्पत्य जीवन की कडवाहट और कसमाहट को सदैव अपने विचारों में ताजा रखती है और हाथ में जो सुख बचा है उसी का आनंद नहीं ले सकती। श्यामा टूटी बिखरी नारी है। सदैव दोहरी मानसिकता में उलझी नारी है। श्यामा मंडी के एक हाइस्कूल में प्रधानध्यापिका के पद पर कार्यरत है। दर्शनशास्त्र में एम्.ए. करना चाहती है। श्यामा के जीजा श्यामा का परिचय प्रोफेसर कुमार से कर देते हैं। कुमार नित्यानंद कालेज में दर्शन विभाग में अध्यक्ष हैं।

राकेश ने कुमार के साथ-साथ महानगर की यांत्रिकता और भयावहता का चित्रण किया है। कुमार महानगर में रहने वाला एक व्यक्ति है जो व्यक्तिगत त्रासदी के साथ-साथ परिवेश से निर्मित पीड़ा भोग रहा है। बम्बई में भीड़ होती

है लेकिन प्रत्येक व्यक्ति अकेला होता है। तेज ट्राफिक में सड़क पार करना, भीड़ से लदालद गाडियों में सफर करना यही बातें भौतिक दृष्टि से असुरक्षित हैं। महानगरीय परिवेश का दबाव, अकेलापन सहयात्री होते हुए भी अजनबीपन महशूस करना आधुनिक जीवन की त्रासदी है। महानगर आपा-धापी से भरा है। किसी को किसी का हालचाल पूछने तक का समय नहीं है। घड़ी की सुईयों पर लोग भागते रहते हैं।

इस परिवेश से ऊबा कुमार का व्यक्तित्व है। ऐसे में श्यामा से संबंध आता है। श्यामा का देव के प्रति जो नजरिया था वही नजरिया कुमार का अपनी पत्नी के प्रति था। श्यामा और कुमार शारीरिक संबंधों से ज्यादा अपने साथी से अपेक्षा करते हैं। यही दोनों में समान बात है फिर भी अपने-अपने स्वभाव के कारण श्यामा और कुमार सही साथी नहीं बने हैं।

श्यामा और कुमार का परिचय सिर्फ परिचय की सीमा तक रहता है वह प्यार में बदलता नहीं है। श्यामा से कुमार ज्यादा "रिजर्व" है। दोनों शरीर तक पहुँचते हैं, पर ऐसी परिस्थिति है कि वे दूर रहते हैं। यह व्यवहार अस्वाभाविक है पर श्यामा की मनोवृत्ति इसके लिए जिम्मेदार है। राकेश ने इस उपन्यास में स्त्री-पुरूष, अशरीरी प्रेम के साथ विधवा विवाह समस्या की चर्चा की है। श्यामा पति के निधन के पश्चात् सास और ननद की आर्थिक मदद कदद करती है। वक्त आने पर उनके साथ रहती है, लेकिन इन कृतियों के पीछे सिर्फ स्वार्थ है। अकेलेपन को दूर करने के लिये श्यामा सास औरननद का उपयोग करती है। दिल से कोई लगाव नहीं है। श्यामा कुमार के साथ न स्वाभाविक रिश्ता कायम करती है, न सास ननद के साथ परेशानी बाँटती है। सब कुछ नकारकर मंडी लौट आना इस बात का सूचक है कि श्यामा की मनोग्रंथि ऐसी है कि वह स्वयं मुक्त होना नहीं चाहती है।

अंत में यही कहा जा सकता है राकेश का उपन्यास आधुनिक जीवन की विसंगति और विडम्बना का चित्र है। परिवेश का दबाव, नारी की घुटन और विवशता को हर एक व्यक्ति अपनी-अपनी हैसियत के साथ झेल रहा है, यही उद्देश्य है जो राकेश व्यक्त करना चाहते हैं।

अनुदित संस्कृत नाटक

राकेश को संस्कृत-साहित्य के प्रति युवावस्था से रूचि थी। एम्.ए.में संस्कृत का अध्ययन किया था। राकेश के दोनों नाटक "आषाढ़ का एक दिन" और "लहरों के राजहंस" की मूल कल्पना संस्कृत साहित्य से ली गयी है। संस्कृत विषय के प्रति राकेश का प्रेम सदैव रहा है।

कालिदास का "अभिज्ञान शाकुंतल" और शूद्रक के "मृच्छकटिक" दोनों संस्कृत साहित्य की कालजयी रचनाएँ हैं। इन महान ग्रन्थों का अनुवाद राकेश ने किया है। "मृच्छकटिक" का हिन्दी रूपान्तर "मिट्टी की गाडी" के नाम से प्रस्तुत किया। सन 1961 में मृच्छकटिक और सन 1965 में शाकुन्तल का अनुवाद प्रस्तुत किया।

अनुदित अंग्रेजी उपन्यास

एक औरत का चेहरा

यह अंग्रेजी के प्रतिष्ठित उपन्यासकार हेनरी जेम्स के उपन्यास "दि पोट्रेट आफ ए लेडी" का अनुवाद है। हेनरी जेम्स उन्नीसवीं शताब्दी के श्रेष्ठ लेखक हैं। "दि प्रोर्टेट आफ ए लेडी" जेम्स का श्रेष्ठतम उपन्यास है। इसमें समाजशास्त्रीय और दार्शनिक प्रश्नों को उठाया है। प्रश्नों के साथ समाधान देने का प्रयास किया है। जेम्स के कृतियों का अनुवाद करना अत्यन्त कठिन कार्य है। अनुवाद तो क्या मूल संवेदना आत्मसात करना कठिन है। शैली सहज सपाट नहीं है, शायद यही कारण है। राकेश ने अपनी कुशल सर्जकता के साथ यह कार्य किया है। पाश्चात्य सभ्यता को हिन्दी मुहावरें में चित्रित करने का अत्यंत कठिन कार्य किया है।

यह अनुवाद अनुवाद की कृत्रिमता नहीं दिखाता है। राकेश ने विश्व की एक श्रेष्ठ रचना का हिन्दी में अनुवाद किया है।

यात्रा-वृत्तान्त

आदमी कई उद्देश्यों से यायावर बनता है। जीवन निर्वाह, अनजाने रहस्यों की खोज, या नये-नये साधनों के अन्वेषण के लिए आदमी यात्रा करता है। ऐसे लोगों में ऐसे व्यक्ति होते हैं, जो स्वभाव से यायावरी वृत्ति के हैं। इनके लिये खास कोई उद्देश्य नहीं होती है। आत्म-संतुष्टि के लिये यात्रा पर चल पड़ते हैं।

मोहन राकेश यायावरी मनोवृत्ति के व्यक्ति थे। मनःशान्ति के लिये राकेश आजन्म जगह-जगह भटकते रहे। मोहन राकेश साहित्य के सभी विधाओं में सफलतापूर्वक यात्रा करते रहें। यात्रा-वृत्तांत की विधा से संबंधित उनकी कृति है - "आखिरी चट्टान तक"। यह यात्रा विवरण सन 1953 में प्रकाशित हुआ। इसमें कन्याकुमारी तक की यात्रा-वृत्तांत निहित है। यात्रा वृत्तान्त के साथ रेखाचित्र और संस्मरण पढ़ने का लाभ मिलता है। अपरिचित स्थल और व्यक्तियों का रोचक, सरस एवं सौष्ठवपूर्ण वृत्तांत इस यात्रा-वृत्तांत में है। दक्षिण भारत के सौन्दर्य का उत्तम वर्णन किया है। समुद्र, डोंगियों और मछलीमारों के सूक्ष्म वर्णन हैं। प्रकृति का अप्रतिम सौन्दर्य वर्णन है। यह वृत्तान्त ऊबाऊ नहीं है। हर जगह राकेश का संवेदनशील मन और सूक्ष्म निरीक्षण के दर्शन होते हैं। राकेश की यह कृति अपने आप में बेजोड है।

बाल-साहित्य

बालकों के लिए साहित्य लिखना आसान काम नहीं है। बाल मनोविज्ञान की सूझबूझ जिस लेखक में है वही यह काम कर सकता है। बच्चों की कल्पना शक्ति तरल होती है। बाल-सुलभ रूचि तथा प्रवृत्ति भी होती है। बाल-साहित्य शाश्वत होता है, क्योंकि युग बीत जाते हैं लेकिन प्रत्येक युग का बचपन एक ही होता है। बच्चे का आचरण एक-सा होता है। मोहन राकेश ने बाल-साहित्य ज्यादा नहीं लिखा। सिर्फ चार कहानियों का एक संग्रह है।

"बिना हाड़ मांस के आदमी"

इसमें राकेश द्वारा बालकों के लिए लिखी चार कहानियाँ संग्रहित हैं। बच्चों की दुनिया में पेड़-पोधे, पशु-पक्षी बोलते हैं, हँसते हैं, रोते हैं। इस तरह

से अभिष्ट बात को कहने के लिए इन पात्रों की सहायता लेना बाल-सुलभ प्रवृत्ति के अनुसार कहा है। गहरी बातों को सरल एवं सीधे ढंग से कहा है। वे कहानियाँ इस प्रकार हैं - 1· सुनहरा मृगा, 2· गिरगीट का सपना, 3· काला बन्दर और लाल अमरूद का पेड़। चौथी कहानी "बिना हाड़ मांस के आदमी" में वैज्ञानिक आविष्कारों की ओर बालकों का ध्यान आकृष्ट किया है। सभी कहानियाँ बालकों की जिज्ञासा बनायें रखती हैं।

नाट्य-साधना

मोहन राकेश नाटककार के रूप में ज्यादा सफल और चर्चित रहें। राकेश ने तीन नाटक लिखे हैं - "आषाढ़ का एक दिन", "लहरों के राजहंस " और "आधे अधूरे"। ये तीनों नाटक एक ही प्रवाह को उजागर करते हैं। मानवी मन और भावना के रोमानी और यथार्थवादी दर्शन तीनों नाटकों के द्वारा होते हैं। राकेश का प्रथम नाटक कल्पना का स्वप्निल जगत् का चित्र है जो यथार्थ के सामने टूट जाता है। दूसरा नाटक सत्य को स्वीकारने वाले और उसका बोझ न उठाने वाले व्यक्तियों का नाटक है। तीसरा नाटक सौ प्रतिशत यथार्थवादी नाटक है। आधुनिक युग की समस्या झेलते पात्रों के मनोभावना का चित्रण है। प्रथम नाटक से तीसरे नाटक तक का प्रवास कल्पना-वृक्ष-यथार्थ इस प्रवाह से गुजरता है।

आषाढ़ का एक दिन

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटकों की शृंखला का "आषाढ़ का एक दिन" महत्वपूर्ण नाटक है। इस नाटक में दो स्तर हैं, एक ओर आधुनिकता है और दूसरी ओर भावना है। कालिदास और मल्लिका नायक और नायिका हैं। के नायक और नायिका मानवी अनाकलनीय रिश्ते के प्रतीक हैं। इस नाटक में तीन अंक हैं। विशेषता यह है कि यह कथा आषाढ़ के दिन शुरू होती है और आषाढ़ के दिन पर ही समाप्त होती है। दोनों दिन वर्षा के हैं लेकिन दोनों परिस्थितियाँ भिन्न हैं।

ग्राम बाला मल्लिका आषाढ़ के प्रथम दिन वर्षा में भीगकर काँपती सिमटती अपने घर में प्रवेश करती है। वह बहुत उल्लासित एवं आल्हादित है। अत्यंत उत्साह के साथ वह माँ को प्रकृति के सौन्दर्य के साथ साक्षात्कार का अनुभव बताना चाहती है। माँ को मल्लिका की बातों में कोई रूचि नहीं है। उदासीन और तटस्थ भाव से अपना काम कर रही है। मल्लिका का कालिदास के साथ पर्वत शिखरों पर घूमना उसे सहय नहीं। अम्बिका कालिदास को पसन्द नहीं करती, क्योंकि वह उसकी बेटी की लोकनिंदा का कारण है। मल्लिका जीवन को अपने ढंग से जीना चाहती है, लोक-निंदा का तनिक उसे भय नहीं है। उसके मन में कालिदास के प्रति कोमल भावना है। उसने भावना में भावना का वरण किया है। उसी भावना से उसे प्रेम है। अम्बिका उसकी भावना को आत्म-प्रवंचना कहती है।

कालिदास हरिण शावक को लेकर मल्लिका के घर आता है। दोनों जख्मी हरिण शावक पर उपचार करते हैं। जिस राज्य कर्मचारी ने हरिण शावक को घायल किया है वह उसकी माँग करता है। कालिदास हरिण शावक के साथ बातें करने में व्यग्र है, मल्लिका दृढता से हरिण शावक को लौटाने का विरोध करती है। बातचीत से राजपुरूष को पता चलता है "ऋतु-संहार" का प्रणेता यही कालिदास है। वह सूचना देता है राज्य कालिदास का सम्मान करके उसे राजकवि का पद देना चाहता है। आचार्य वररूचि स्वयं कालिदास को उज्जैन ले जाने के लिए आते हैं। मल्लिका के हर्ष का पार नहीं रहता। उस समय मल्लिका की माँ अम्बिका उदासीन है। अम्बिका की उदासीनता मल्लिका को खलती है। कवि मातुल अम्बिका से कहते है कि कालिदास को राजकीय सम्मान स्वीकार नहीं है। कालिदास का मत है कि, "मैं राजकीय मुद्राओं से क्रीत होने के लिए नहीं हूँ।" ग्राम युवक निक्षेप करता है कालिदास का हठ सिर्फ मल्लिका दूर कर सकती है। माँ के विरोध के बावजूद मल्लिका उस क्षण का महत्व समझकर कालिदास के पास जाती है। ग्राम पुरूष विलोम मल्लिका के जाने के पश्चात् अम्बिका से कालिदास के बारे में चर्चा करता है, जिससे अम्बिका को पीड़ा पहुँचती है। मल्लिका कालिदास के साथ घर लौटती है। कालिदास और विलोम के मध्य जो वार्तालाप होता है वह किसी को प्रिय नहीं है। विलोम की दृष्टि में, विलोम क्या है एक असफल कालिदास और कालिदास क्या है, एक सफल

विलोम। कालिदास की प्रतिभा का पूर्ण विकास उज्जयिनी जाकर होगा यह बात मल्लिका समझाती है। लेकिन कालिदास आशंकित है कि ग्राम से अलग होने पर वह आत्मीय सूत्रों से टूट जायेगा और अपनी भूमि से उखड़ जायेगा। मल्लिका उसे ऐसा न होने का विश्वास दिलाती है। कालिदास विदा माँगता है तो मल्लिका उसे कहती है - "नहीं विदा नहीं दूँगी। जा रहे हो इसलिए प्रार्थना करूँगी कि तुम्हारा पथ प्रशस्त हो।"

कालिदास उज्जयिनी जाकर अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना करते हैं, उनकी प्रसिद्धि उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। गुप्तवंशीय राजदुहिता से उनका विवाह हो जाता है। मल्लिका कालिदास की प्रसिद्धि से सार्थकता अनुभव करती है। कालिदास के विषय में कोई अशोभनीय कथन उसे सहय नहीं। वह व्यवसायियों से कालिदास की रचनाओं की प्रतियाँ मँगाकर पढ़ती है एवं अपने बीमार माँ की परिचर्या में व्यस्त रहती है। उन्हीं दिनों कालिदास जो इस समय देव मातृगुप्त नाम से जाने जाते हैं, कश्मीर जाते समय अपने ग्राम में एक दिन रूक जाते हैं। निक्षेप यह बात मल्लिका को बताते हैं। यह समाचार सुनकर मल्लिका स्तंभित रह जाती है। वह कालिदास से काल्पनिक मिलन की कल्पना में खो जाती है। वह सोचती है, अपने हाथों से सिले पत्रों का ग्रन्थ उन्हें भेंट करेंगी और कहेगी यह तुम्हारी नयी रचना के लिए है। मन में आशंकित है, कहीं कालिदास में कोई परिवर्तन तो नहीं हुआ ? इसी विचार में खोयी है कि कालिदास की राजमहिषी प्रियंगु-मंजरी मल्लिका के घर आती है। प्रियंगुमंजरी घर की जीर्णावस्था देखकर उसका परिसंस्कार कराना चाहती है। किसी योग्य अधिकारी से मल्लिका की शादी करना चाहती है, स्वाभिमानी मल्लिका इन्कार करती है। मन ही मन आहत होती है। अम्बिका की आवेशपूर्ण बात और मल्लिका की उदासीनता देखकर प्रियंगुमंजिरी यथासंभव मदद देने का आश्वासन देकर चली जाती है। माँ और मल्लिका मन से दुःखी है, इसी समय विलोम उन्हें कालिदास की चर्चा कर के पीड़ा पहुँचाता है। उसका विचार था कालिदास मल्लिका से क्यों मिलने नहीं आया, एक ओर यह बात सच भी है। भावना के आवेश में मल्लिका की आँखों में आँसू आते हैं।

कुछ वर्षों के बाद आषाढ़ की वर्षा में भीगा बैसाखी के सहारे मातुल मल्लिका के घर में प्रवेश करता है। वह मल्लिका को अपने राजप्रसाद के अनुभव सुनाता हैं, वहीं उसका पाँव टूट गया है। सबका श्रद्धापात्र होने पर भी उसे वहाँ कुछ भी अच्छा नहीं लगा। वही मल्लिका को बताता है कि कालिदास ने कश्मीर छोड़ दिया है। कुछ लोगों के अनुसार उसने संन्यास ले लिया है। मल्लिका विचलित होती है। वह कालिदास का संन्यास लेना, सूनकर तटस्थ नहीं रह पाती। अपनी बच्ची की ओर संकेत कर के कहती है - "यह मेरे अभाव की सन्तान है। जो भाव तुम थे वह कोई दूसरा नहीं हो सका, परन्तु अभाव के कोष्ठ में किसी दूसरे की जाने कितनी आकृतियाँ है।" आज वह अपनी दृष्टि में भी एक विशेषण भर रह गयी है। काश! कालिदास मल्लिका के अभावों का अनुमान लगा पाते ? उसकी वेदना बढ़ती गयी। इसी प्रक्रिया में उसने देखा कि कालिदास द्वार खोलकर प्रविष्ट हो रहा है। यद्यपि कालिदास ज्वराक्रान्त स्थिति में यात्रा करके आये तथा थकान अनुभव नहीं करते हैं। वह आषाढ़ की वर्षा में भीगे हैं। इस तरह का भीगना उनके जीवन की महत्वाकांक्षा है। मल्लिका अचानक विश्वास नहीं करती कि सामने कालिदास है। कालिदास तन और मन से वर्षा में भीगे हैं। मल्लिका को लगता है पिछले वर्षा में उसकी आशा के प्रतिकुल बहुत परिवर्तन हो गया है। वह पिछली बार मल्लिका से इसलिए मिलने नहीं आये क्योंकि उसे डर था कहीं मल्लिका की आँखें उसके अस्थिर मन को और अस्थिर ना कर दें। अब वह प्रभुता एवं सत्ता के मोह से मुक्त है। इसी वार्तालाप के मध्य कोई द्वार खटखटाता है। द्वार बन्द था इसलिए वह व्यक्ति लौट जाता है। कालिदास अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण करता है। उसने आजतक जो लिखा है उसका परिवेश ग्राम प्रांतर ही है। कुमार संभव की पृष्ठभूमि हिमालय है। तपस्विनी मल्लिका उमा है। "मेघदूत" में यक्ष की पीड़ा स्वयं अपनी कालिदास की पीड़ा है। शकुन्तला के रूप में स्वयं मल्लिका ही उसके सामने थी। काश! मल्लिका ने उसकी रचनाएँ पढ़ी होती। मल्लिका के बताने पर कि उसके पास सभी रचनाओं की प्रतियाँ हैं, कालिदास को अपने अभाव और प्रतीत होते हैं। उसे लगता है कि वर्षों पहले वहाँ लौट आना चाहिए था। मल्लिका द्वारा सिले पन्नों को देखकर कालिदास को लगता हैयह अब कोरे नहीं हैं उस पर अनन्त सर्गों वाले महाकाव्य की रचना हो चुकी है। कालिदास मल्लिका के साथ

फिर से जीवन का आरम्भ करना चाहता है, तभी बच्ची के रोने की आवाज आती है। कालिदास के पूछने पर बताती है कि, यह मेरा वर्तमान है। तभी विलोम घर में आता है, कालिदास को देखकर हतप्रभ होता है, फिर बाँहे फैलाकर मिलना चाहता है, अतिथि का गृहस्वामी की तरह आतिथ्य करना चाहता है। कालिदास उसके सामने से हट जाता है। विलोम चला जाता है। दोनों आषाढ़ के उस दिन का स्मरण करते हैं, जब वह दोनों साथ में भीगे थे। आज वही समय, चेतना और हृदय हैं, पर समय की शक्ति का अनुभव हो रहा है, कि समय किसी की प्रतिक्षा नहीं करता। कालिदास क्षण भर रूक कर बाहर चले जाते हैं। मल्लिका बच्ची की गोद में लिए जाते हुए कालिदास को देखती रहती है।

लहरों का राजहंस

प्रस्तुत नाटक में सुन्दरी के रूपजाल में फँसे किन्तु बुद्ध के प्रभाव से विचलित नन्द की दुविधाग्रस्त स्थिति का अंकन किया है। नन्द कपिलवस्तु के राजकुमार हैं। नन्द की पत्नी सुन्दरी कामोत्सव का आयोजन करती है। ठीक उसी रात यह कामोत्सव है जिसके अंतिम प्रहर में यशोधरा संन्यास दीक्षा ग्रहण करने वाली है। कितना असमयोचित उत्सव है। सुन्दरी की अपनी मान्यता है कि "नारी का आकर्षण पुरूष को पुरूष बनाता है तो उसका अपकर्षण उसे गौतम बुद्ध बना देता है।" इस नाटक में हंस प्रतीक है सुखी जीवन और मुक्ति के।

सुंदरी हरप्रयत्न प्रयास कर रही है कि नन्द उसके मोहजाल में जकडा रहें। नन्द मन ही मन अस्वस्थ चित्त है, यशोधरा के प्रति मन में आदरभाव है। बुद्ध के प्रति नितान्त श्रद्धा है। एक तरफ यशोधरा है जो मोह-माया त्याग रही है तो दूसरी ओर सुन्दरी कामना का उत्सव मना रही है।

बुद्ध प्रभाव के कारण कामोत्सव का आयोजन असफल हो जाता है। सुन्दरी आहत है, नन्द सुन्दरी और बुद्ध के दो बिंदुओं के आकर्षण में फँसा है। सुंदरी से आज्ञा ग्रहण कर के नन्द तथागत से मिलने के लिए जाता है और अपनी इच्छा के विपरित केश-वपन करके आता है। ऐसी अवस्था में सर तो संन्यासी की तरह मुंडवाया

और राजवस्त्र परिधान किये नन्द को सुंदरी पहचानती नहीं। नन्द व्याघ्र से निहत्थे युद्ध कर आया है। सुंदरी नन्द को अजनबी व्यक्ति कहती है और नन्द मन ही मन टूटकर रह जाता है। वह एक ऐसा नक्षत्र है जिसका कहीं वृत्त नहीं है। सुंदरी की कटुक्तियाँ उसे असहाय बनाकर छोड़ देती है।

आधे अधूरे

मोहन राकेश का यह तीसरा नाटक है। कहा जाता है राकेश ने तीन नहीं बल्कि एक ही पूरा नाटक लिखा और वह है "आधे अधूरे"।

"आधे अधूरे" नाटक पूर्णतः यथार्थवादी नाटक है। राकेश ने पूर्ववर्ती नाटकों में ऐतिहासिकता का थोड़ा सहारा लिया था, लेकिन इस नाटक में ऐतिहासिकता का आधार नहीं है। अपने आसपास रहने वाले लोग हैं जो मुखौटे बदलकर इस नाटक में सावित्री, महेन्द्र और अन्य पारिवारिक सदस्य बनकर हमारे सम्मुख अपनी समस्याएँ लेकर उपस्थित हो गये हैं।

सातवें दशक में लिखा यह नाटक आज भी उतना ही यथार्थवादी है जितना सातवें दशक में था। समस्या और मानवीय अनुभूति में कोई बदलाव आया नहीं है। एक चीज स्पष्ट रूप से दिखायी देती है कि युवा पीढ़ी पर पड़नेवाले पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव इस पीढ़ी को दिशाहीन बना रहा है। यह बात "आधे अधूरे नाटक में प्रथम व्यक्त की गयी है। नाटक के सभी पात्र एक विशिष्ट समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं। नारी समाज, खोखला उच्च वर्ग, युवा पीढ़ी और बदलती नैतिक मान्यताएँ ये सभी बातें आज का समाज को प्रगति की ओर ले जाने में असहाय है।

सावित्री दिन भर दफ्तर का काम करके थकी-हारी घर लौटी है। घर में कोई मौजूद नहीं है। छोटी लड़की किन्नी की किताबें फटी-बिखरी हैं। लड़का अशोक निकम्मा है, उसने मॅगजीन से काटी तस्वीरे फैलाकर रखी हैं। कुर्सी पर पाजामा झूल रहा है। चाय के बर्तन वैसे ही झूठे पड़े हैं।

पति महेन्द्रनाथ घर आने पर सावित्री घर की वस्तुएँ बिखेरे रखने पर शिकायत करती है। रोज ही घर अव्यवस्थित मिलने की वजह से नाराज होती है। किन्नी को दूध भी दिया नहीं है। महेन्द्र दबा-घुटा-सा इन आवेशपूर्ण कथनों का उत्तर एक या दो शब्दों में देता जाता है। सावित्री महेन्द्र को अपने बॉस सिंघलिया के आने की सूचना देती है। ऐसे अवसरों पर महेन्द्र हमेशा घर से बाहर चला जाता है। इस बात पर दोनों में काफी नोक-झोंक होती है। महेन्द्र को अपने मित्र जुनेजा के पास जाना है, सावित्री जुनेजा से नफरत करती है। जुनेजा के नाम से सावित्री को चिढ़ है। सावित्री का विश्वास है; महेन्द्र की व्यावसायिक असफलता का मूल जुनेजा ही है। महेन्द्र सफाई देते हुए कहता है उन दिनों घर के खर्चे ज्यादा थे इसलिए व्यवसाय के प्रारम्भ में पैसा निकालना पड़ा था। दोनों छोटी-छोटी बातों पर लड़-झगड़ते हैं और कृति द्वारा मन की भड़ास निकालते हैं।

सावित्री का विचार है कि सिंघानिया उसके पुत्र अशोक को नौकरी देगा। सिंघानिया चाहे जैसा भी आदमी हो उसका शुक्रगुजार रहना चाहिए। महेन्द्रनाथ कहता है पहले जगमोहन आता था फिर मनोज, हर आनेवाले का वह शुक्रगुजार है ही। यह सीधे सावित्री के चरित्र पर चोट थी। सावित्री इस बात से पीड़ा महसूस करती है।

इसी दौरान इस दाम्पत्य की बड़ी लड़की बिना घर में प्रवेश करती है। वह अपने पति से झगड़ा करके आयी है। बिना को कोई आने की वजह खुलकर नहीं पूछता। लड़की भी स्पष्ट कहती नहीं। लड़की को असल में कोई ठोस शिकायत नहीं है। बिना ने मनोज के साथ प्रेम-विवाह किया है। अब बिना का कहना है मनोज को वह अच्छी तरह से जानती नहीं है। आर्थिक कठिनाई भी नहीं है, "प्रॉब्लेम "एक ही है, बिना का कहना है, "दो आदमी जितना साथ रहें, एक हवा में साँस ले, उतना ही ज्यादा अपने को एक दूसरे से अजनबी महसूस करें।" इस घर से वह एक ऐसी चीज लेकर गयी है जो उसे स्वाभाविक नहीं रहने देती। यह बात मनोज बिना को बड़ी आत्मविश्वास से कहता है। इस बात से चिढ़ कर बिना घर वापस चली आती है; वह चीज खोजने के लिए जो उसे हीन बनाती है।

कुछ समय बाद छोटी लड़की किन्नी रोती आती है। घर में कोई भी न होना उसकी शिकायत है। जेब खर्च, स्कूल की चीजें और दूध भी वक्त पर नहीं मिलता। स्कूल में अपमानित होना पड़ता है। सावित्री घर को ठीक करती है, अशोक को और अन्य सदस्यों को बताती है कि सिंघानिया आ रहा है। महेन्द्र फिर से बड़ी लड़की के सामने सावित्री के चरित्र पर ठेस पहुँचाता है। बिना माँ को सँभालती है। इस बीच अशोक और छोटी किन्नी झगड़ते हैं, अशोक बाल खींच रहा है। अशोक को शिकायत है कि किन्नी ऐसी किताबें पढ़ रही है जो बुरी मानी जाती है लेकिन ये किताबों तो अशोक के बिस्तर से उठायी हैं। दोनों भी एक जैसे हैं, पर एक दूसरे पर आरोप कर रहे हैं।

इन सब बातों से महेन्द्रनाथ अपना भी गुस्सा निकालता है। महेन्द्र कहता है, "सब उससे उल्टे ढंग से बात करते हैं।" हर वक्त की धुत्कार एवं कोच ही उसकी इतने वर्षों की उपलब्धि है। वह इस घर में एक रबड़ स्टैंप भी नहीं सिफ बार-बार घीसा जाने वाला रबड़ का टुकड़ा है। सभी परिवार के सदस्यों की जिंदगी बरबाद करने का जिम्मेदार वही समझा जाता है। फिर भी वह घर से चिपका है क्योंकि अन्दर से वह आराम तलब है। वह महसूस करता है कि वह एक कीड़ा है जिसने अन्दर ही अन्दर इस घर को खा लिया है। महेन्द्र घर से चला जाता है।

अशोक सिंघानिया के जरिये नौकरी नहीं चाहता है। सिंघानिया को अशोक चुकन्दर कहता है जिसे न बैठने की तमीज है न बात करने का ढंग है। सिंघानिया आने पर कुछ फालतु बातचित के बाद सावित्री अशोक के नौकरी का प्रस्ताव सामने रखती है। सिंघानिया दूसरों की पूरी बात न सुने अपनी ही रट लगाये रहता है। अपने बड़प्पन का ढोल पीटता रहता है। सावित्री को यह व्यवहार अखरता है, लड़का अपनी जगह विवश है। माँ-बेटे में थोडी ताक-झाँक होती है। सावित्री इसकी सफाई देती है कि वह ऐसे लोगों से सम्बन्ध इसलिए बनाना चाहती है कि इस घर का कुछ बने। बिना चाहकर भी स्थिति को सँभालने में सफल नहीं हो पाती।

सावित्री दूसरे दिन "ऑफ मूड" में आफिस चली जाती है। जुनेजा शाम को सावित्री से बात करने के लिए घर आने वाला है। अशोक और बिना आपस में अपने दिल की बाते कहते हैं। अशोक इस दौरान टिन का डिब्बा खोलने के लिए बाहर चला जाता है। बाहर से किन्नी को धकेलते हुए अन्दर लाता है। किन्नी अपनी सहेली सुरेखा से स्त्री-पुरूष यौन सम्बन्धी बातें करती, अशोक सून लेता है। किन्नी अपना जुर्म कुबुल न करते उल्टे अशोक की गर्लफ्रेन्ड के बारे में बोलती है कि अशोक किन्नी की चीजें उसे उपहार स्वरूप देता है। सावित्री आती है। बिना चाय का आग्रह करती है पर सावित्री अपने ही उलझें मूड में है। उसका जगमोहन के साथ कहीं बाहर जाने का प्रोग्राम है। जुनेजा के आने की खबर बिना देती है पर सावित्री स्पष्ट कहती है वह जुनेजा से मिलना नहीं चाहती है। वह यह भी कहती है कुछ दिनों बाद बिना को इस घर में मिलेगी नहीं। अपने ही मूड में बाहर जाने की तैयारी करती है। जाने से पहले सावित्री अपनी मानसिक घुटन का इजहार बिना के सामने करती है। पुरानी स्थिति को उजागर करती है। सावित्री चली जाती है लेकिन घर से जाते समय बताती नहीं। किन्नी रोती घर आती है वह किसी बडे व्यक्ति को सुरेखा के मम्मी के पास ले जाना चाहती है। सुरेखा की माँ घर को लेकर बहुत कुछ कहती रहती है। बिना के साथ न चलने पर क्रोध बढ़ता है।

तभी जुनेजा का आगमन होता है। जुनेजा पीछे के दरवाजे से इसलिए आता है क्योंकि उसने बाहर जगमोहन की गाड़ी देखी है। जुनेजा बताता है महेन्द्र की तबीयत ठीक नहीं, वह रात भर ठीक तरह से सोया नहीं है। बीना कहती है उसे महेन्द्र को समझना चाहिए, किन्तु जुनेजा का कहना है उसे कोई समझ नहीं सकता। सावित्री को महेन्द्र प्यार करता है। बिना अतीत की यादें ताजा करती है जो अच्छी नहीं हैं। महेन्द्रनाथ को चीखते हुए पीटना, उसके कपड़े फाड़ना, बच्चों के सामने सावित्री से बुरी हरकतें करना, इसके बावजूद महेन्द्र का कहना है कि जुनेजा सावित्री को समझाये। इसी बातचीत के दौरान सावित्री घर लौटती है। पहले से ज्यादा उखड़ी हुई। आते ही किन्नी को डाँटती है। लड़की ज्यादा हठ करती है तो उसे कमरे में बन्द कर देती है। जुनेजा सावित्री से कहता है कि

वह किसी प्रकार महेन्द्र को छुटकारा दे दे। सावित्री कहती है महेन्द्र की ना कोई शख्सियत है ना कोई माद्दा। दोस्तों की वजह से महेन्द्र बिगड़ा है। सावित्री महेन्द्र को बाईस साल से जानती है।

जुनेजा उसे बीस वर्ष पूर्व के उन दिनों की याद दिलाता है कि आज जो बातें सावित्री कह रही थी ठीक ऐसी ही बातें जुनेजा के कन्धों पर सिर रखकर कही हैं। उस वक्त कहा था महेन्द्र बहुत लिजलिजा और चिपचिपा-सा आदमी है। जुनेजा के बाद कुछ दिन शिवजीत से मैत्री कर ली। उसके पास बड़ी डिग्री और पूरी दुनिया घूमने का अनुभव था। बाद में सावित्री ने पहचान लिया शिवजीत दोगले किस्म का व्यक्ति है। उसके बाद जगमोहन आया ऊँचे सम्बन्धों वाला, जबान का मीठा, टीपटाप रहने वाला और खर्च में दरिया दिल। उससे सावित्री की शिकायत थी कि वह समान रूप से सबके ऊपर पैसा खर्च क्यों करता है ? सख्त से सख्त बात खामोशी और मुस्कुराहट के साथ निगल लेता था।

सावित्री के लिये जीने का मतलब था कितना कुछ एक साथ पाकर और कितना कुछ एक साथ ओढ़कर जीना। इस स्वभाव से एक बार इतना बड़ा झटका खाना पड़ा। एक मित्र मनोज था जो सावित्री की लड़की को लेकर भाग गया। जगमोहन के पीछे फिर एक-बार भागने की कोशिश की। इस बार भी नाकामयाब रही। यह सब बातें सूनकर सावित्री कहती है, उसे महेन्द्र को अपने पास ही रखना बेहतर है। जुनेजा भी कहता है अब वह लौटकर नहीं आयेगा। महेन्द्र इतना कमजोर बेसहारा नहीं है, जितना सावित्री समझती है। इतने में अशोक बतलाता है महेन्द्र वापस आ गया है और ब्लडप्रेशर बढ़ने से स्थिति खराब है। महेन्द्रनाथ घर में प्रवेश करता है।

एकांकी साहित्य एवं अन्य नाट्य-प्रयोग

राकेश ने नाटक के अतिरिक्त एकांकी, बीज नाटक, पार्श्व नाटक और ध्वनि नाटक लिखें। "अंडे के छिलके" अन्य एकांकी तथा बीज नाटक और "रात बीतने तक" तथा अन्य ध्वनि नाटक" इन दोनों संग्रहों का प्रकाशन राकेश के मरणोपरान्त सन 1973 और सन 1974 में हुआ। प्रथम संग्रह में चार एकांकी, दो बीज नाटक

और पार्श्व नाटक संकलित हैं और द्वितीय संग्रह में संकलित सभी को ध्वनि नाटक ही कहा जा सकता है।

इस साहित्य से राकेश का नया व्यक्तित्व उभरकर सामने आया है। नयी विचारधारा अपनाने वाला राकेश एकांकी क्षेत्र में सफल हुआ है। इन एकांकियों में आम भाषा के सहारे नित्य जीवन में घटित स्थितियों का चित्रण किया है। "अंडे के छिलके" में जो एकांकी हैं वे चारों अलग अलग संदर्भ से जुड़े है।

1. अंडे के छिलके

यह एक परिवार की कथा है। कथावस्तु सीधी, सपाट और स्पष्ट है। प्राचीन परम्परा का रक्षण करने वाली माँ है, दो पुत्र दो स्नुषा हैं जो माँ से अंडे के छिलके छुपाते रहते हैं। माँ के आदर्श को ठेंस पहुँचाना नहीं चाहते। माँ यह सब जानते हुए अनजान बन रही है। नये और पुरानी पीढ़ी का संघर्ष है और समझौता भी है। सभी पात्र मर्यादाशील हैं, इसलिये समझौते के साथ एक दूसरे के प्रति प्रेम और आस्था है।

2. सिपाही की माँ

यह दूसरी महत्वपूर्ण एकांकी है। इस नाटक में राकेश ने मूल्यों के टूटने की प्रक्रिया को राष्ट्रीय समस्या से जोड़ा है। इस एकांकी में विवश नारी है, जो स्वार्थ के लिए पुत्र को लड़ाई के मैदान में भेजती है। आखिर माता के मन में इकलौते पुत्र के प्रति अपार स्नेह भी है। "बिशनी" मग्न और टूटे आशाओं के साथ जी रही है। "मुन्नी" प्रतीक्षा करती हैं, निराश नहीं है। एक पात्र पीड़ा का बोध देता है और दूसरा आशा का बोध देता है।

3. प्यालियाँ टूटती हैं

उच्च-मध्यमवर्ग की स्थिति का चित्रण राकेश ने किया है। इस एकांकी में मूल्य नहीं संबंध टूटते हैं। निरन्तर एक के बाद एक प्यालि का टूट जाना नायिका माधुरी की घबराहट को बढ़ा देता है। माधुरी हीन ग्रंथि से पीड़ित है। उसके मन में "इनफिरियारिटी काम्पलेक्स" है। मेहमान आने पर वह ज्यादा

दबी-दबी रहती है। माधुरी का चरित्र कृत्रिमता, पाखंड और अहंवादी है। राकेश इस एकांकी के माध्यम से आडम्बर, कृत्रिम मूल्यों को अपनाकर और इन सब में स्नेह की बलि देनेवाली दो चेहरे-वाली उच्चस्तरीय सोसायटी का नकाब उतारते हैं। कृत्रिम मूल्यों के सामने सच्चे मूल्यों की अवहेलना किस तरह जीवन में घर करती है, यही एकांकी का उद्देश्य है।

6· बहुत बड़ा सवाल

यह संग्रह का चौथी एकांकी है। इस एकांकी के जरिये से आधुनिक युग की मिटिंग्ज, सभा-सोसायटी और यूनियन्स पर व्यंग्य किया है। 'बातें ज्यादा काम कम' इस मंत्र को आज अपनाया गया है। स्वार्थ का प्रदर्शन सामाजिक कार्यक्रमों में करने में कोई लज्जित नहीं होता है। यह वर्तमान व्यवस्था की जीर्ण तस्वीर है। समाज में न कर्तव्य का ज्ञान है न मर्यादा का। समाज बेमानी और बेकार हो गया है।

एकांकि में वर्णन किया है "लो ग्रेड वर्कर्ज वेलफेयर सोसायटी" के मिटिंग का। सभी सदस्य छोटी-छोटी बात पर उलझते रहते हैं। मुख्य विषय कहीं दूर जाता है। मिटिंग अनिर्णित समाप्त होती है। एकांकी का व्यंग्य तीखा है। समकालिन परिवेश में बनते-बिगड़ते मानवी संबंधों का भी चित्रण किया गया है। राकेश बताना चाहते हैं कि समाज, व्यक्ति और उसकी समस्त योजनाएँ बेकार हैं - समाज वाद के नाम पर कलंक है, और हम आज़ादी की रौ में बहकर अपने दायित्व बोध और जीवनमूल्यों से कतराते रहे हैं।

बीज नाटक

1· शायद

"शायद" एक बीज नाटक है। दो पात्रों के माध्यम से आधुनिक दाम्पत्य जीवन की ऊब, उदासी, निराशा और खालीपन की स्थिति को उजागर किया है। विवाहपूर्व खुशमिज़ाज रहने वाला पुरूष विवाह के बाद खाली, अकेला अनुभव करता है। स्त्री यह सब जानकर अनदेखा कर देती है। एक-दूसरे को समझने का

12820
A

अभाव है इसी कारण दरार पर दरार, अन्तराल पर अन्तराल पैदा करते जाते हैं। कोई निश्चयी भाव नहीं। सभी जवाब "शायद" भव में आते-जाते हैं।

बीज नाटक का अर्थ है "अचेतन मन में विविध स्थितियों के दबाव के कारण बीज रूप में पड़े मनोभावों को अभिव्यक्ति देने वाला नाट्य-प्रयोग।" सिर्फ दो पात्रों के माध्यम से राकेश ने दाम्पत्य जीवन के खालीपन का प्रभावी चित्रांकन किया है।

2. हं

बीजनाटक की "हं" एकांकी दूसरी कड़ी है। यहाँ भी दो पात्र हैं। पप्पा और ममा - दोनों में स्नेह हैं लेकिन परिस्थितिवश एक-दूसरे का बोझ हल्का नहीं कर सकते। दोनों के पास ऐसा कोई साधन नहीं जो जीवन के प्रति उन्हें आस्थावान बनाये रखे। अपने ही जीवन के प्रति निराशा, ऊब है। रिक्तता और शेष जीवन का भार ढ़ोती यह दाम्पत्य तल्खी और ऊब से ही ऊब गया है।

पार्श्वनाटक

"छतरियाँ"

राकेश ने एक व्यक्ति के माध्यम से राष्ट्र और देशव्यापी समस्या का चित्रण किया है। अनेक आवाजों के बीच एक पुरूष कंठ की आवाज सामने आती है जो युग के संकट, मूल्यों के विघटन, प्रश्निल जीवन और समस्याकुल संसार को प्रतिध्वनित करती है। यह नाटक समकालिन संकट बोध और मानवीय मूल्यों के अनेक बिंदू स्पष्ट करता है।

राकेश ने नाट्य-क्षेत्र में कतिपय प्रयोग किये हैं। कितने अजनाने पंथों का राकेश उद्‌घाटन करते अगर वे कुछ और समय जीवित रहतें।

ध्वनि-नाटक

1. रात बीतने तक

मोहन राकेश ने नाटक, एकांकी, बीज नाटकों के साथ ध्वनि-नाटकों की सफल रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। इस संग्रह में आठ ध्वनि नाटक हैं। ये नाटक रेडियों पर सफलता से प्रस्तुत किये जा चुके हैं।

"लहरों के राजहंस" नाटक का यह संक्षिप्त रूप है। नन्द और सुन्दरी का गर्व और उसके खंडन की यह कथा है। नन्द का द्वन्द उभरकर स्पष्ट रूप से सामने नहीं आता। इस नाटक के अन्त में सुन्दरी का भिक्षुओं के साथ स्वर मिलाकर गाना अस्वाभाविक लगता है।

2. सुबह से पहले

यह दो बागी एवं एक मध्यमवर्गीय परिवार की कथा है। इस नाटक में राकेश ने साधारण गृहस्थों के भय एवं स्वार्थपरकता पर प्रकाश डाला है। यह नाटक स्वतंत्रता आंदोलन के क्रान्ति दल की कार्य पद्धति की एक झलक है।

3. कँवारी धरती

इस नाटक में मध्यमवर्गीय परिवार में कँवारी लड़की के गर्भ की समस्या का यथार्थवादी चित्रण है। भारतीय सुसंस्कारित परिवार में यह चित्र कैसी स्थिति उत्पन्न करता है इसके अलग-अलग नमुने पेश किये गये हैं। एक लड़की रजनी, अपने प्रेम के प्रति ईमानदार है। इस नाटक का अन्त त्रासद है। भावना, यथार्थ या वास्तव परिस्थिति में एक कुँआरी लडकी का माँ बनना कितना पीड़ादायक होता है, इसका ज्वलंत अनुभव है। रजनी की आत्महत्या नाटक का चरमबिंदू है।

4. आषाढ़ का एक दिन

कालिदास और मल्लिका के स्वाप्निल दुनिया को वास्तविकता कैसी वीरान बना देती है इस बात का विवेचन नाटकों के अध्याय में किया गया है। इस नाटक का रेडियो रूपांतर नाटक के समान ही है।

4· दूध और दाँत

बाढ़ग्रस्त गाँव के परिवार की मर्मस्पर्शी कहानी है। स्त्री का स्त्रीत्व रोटी पर खरीदा जाता है और बच्चे को माता भूख के लिये त्याग देती है। इससे बड़ी विड़म्बना कौनसी हो सकती है। पेट की आग मनुष्य की इज़्ज़त और भावना का गला घोंट देती है। दो नारियाँ हैं एक परिस्थिति से टक्कर लेती है और दूसरी वास्तविकता का सामना करती है। यह नाटक देहाती बाढ़ग्रस्त मानव की मनःस्थिति को हमारे सामने प्रस्तुत करता है।

5· आखिरी चट्टान तक

यह मोहन राकेश के यात्रा वृत्तान्त का रेडियो रूपांतरण है। यह "यात्रा वृत्तांत" तक सीमित रहता तो मूल्यवान होता। बम्बई से कन्याकुमारी तक का यह वृत्तांत अविस्मरणीय कथा ही है।

6· उसकी रोटी

यह मोहन राकेश की कहानी है। इस पर आधारित यह रेडियो रूपांतर है। इसका विवेचन कहानी के विधा में किया गया है।

राकेश एक प्रयोगशील रचनाकार थे। नाटक की तरह एकांकी क्षेत्र में सफलता से आगे बढ़ते गये ध्वनि नाटकों में सजग कलाकार की भाँति सफल प्रयोग करते रहे। बीज नाटक और पार्श्व नाटक राकेश के प्रयोगशीलता के द्योतक हैं। राकेश ने जिस साहित्य की दिशा में कदम रखा उसी ओर सफलता उनके कदम चुमती रही। एकांकी एवं ध्वनि या पार्श्वनाटकों के माध्यम से मानवीय अनुभूति को राकेश व्यक्त करते रहे।

राकेशजी की नाट्य-साधना पूर्ण नाटक, एकांकी नाटक, ध्वनि नाटक, बीज नाटक, कथा रूपांतर, अनुवाद करती हुई चरमसीमा पर पहुँची हुई दिखायी देती है। राकेश ने जिस यथार्थ को भोगा, देखा, अनुभव किया उसीके माध्यम से यह साधना विकसित होती हुई हमें दिखायी देती है। राकेश ने कथा-साहित्य की अपेक्षा नाटक के माध्यम को अधिक महत्व दिया। हर शब्द की कीमत जानकर

उस-को पहचानकर सिद्ध कर दिया। राकेश के साहित्य का प्रत्येक शब्द तराशकर लिखा गया है कारण राकेश ने "नाटक में शब्द का स्थान" पर नेहरू फैलोशिप के अधिक कार्य किया था। राकेश शब्द की ताकद जानते थे। प्रत्येक शब्द अथवा स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रखने में सक्षम हैं।

निष्कर्ष

राकेश की प्रतिभा बहुमुखी थी। यदि राकेश एक सफल नाटककार के रूप में जाने जाते हैं लेकिन नाटकों के साथ कहानी, एकांकी, उपन्यास आदि साहित्य के सभी विधाओं पर राकेश ने काम किया है। एक प्रतिभा संपन्न साहित्यकार साहित्य की जिस विधा को हाथ लगाये वह साहित्य सोने की तरह दमकता है। राकेश ऐसे ही परिस स्पर्शी साहित्यकार थे। कवि के रूप में राकेश ने बहुत सर्जन नहीं किया फिर भी सभी गद्य साहित्य में राकेश का कवि मन दिखायी देता हैं, गद्य में पद्यात्मकता है। साहित्य सर्जना में राकेश ने सभी शैलियों का प्रयोग किया है। राकेश की अपनी कुछ मान्यताएँ थी, इसलिये राकेश का साहित्य मार्ग पारम्पारिक नहीं है। वही रास्ता है जिस पर हम रोज चलते हैं लेकिन पैरों के नीचे देखते नहीं। यही रोजमर्रा का जीवन है। राकेश ने रोजमर्रा के जीवन को साहित्य विषय बनाया है।

साहित्य के सभी पात्र मुखौटा बदलकर हमारे ईद-गिर्द घूमते नज़र आते हैं। मनुष्य की भावना को महत्व दिया गया है। इसलिए राकेश का साहित्य जीवन का यथार्थ चित्र होता है और सामान्य व्यक्ति को अपना लगता है।

संदर्भ

1. सारिका, राकेश विशेषांक, पृ.66
2. चंद सतरें और - ले.अनिता राकेश, पृ.86
3. नाटककार मोहन राकेश - संपादक सुंदरलाल कथुरिया, पृ.25-26
4. नाटककार मोहन राकेश - ले.जीवन प्रकाश जोशी, पृ.99
5. सारिका, सितम्बर 1974, पृ.67
6. मोहन राकेश का साहित्य (समग्र मूल्यांकन) - ले.डॉ.शरेशचन्द्र चुलकीमठ, पृ.23
7. चंद सतरें और - ले.अनिता राकेश, पृ.101
8. वही, पृ.101
9. मोहन राकेश का व्यक्तित्व और कृतित्व - ले.डॉ.सुषमा अग्रवाल, पृ.321